चौपाल की बातें

जन-सामान्य के जीवन को ऊंचा उठानेवाली पोथी

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

चौपाल की बातें

जन-सामान्य के जीवन को ऊंचा उठानेवाली पोथी

सम्पादक
यशपाल जैन

१९७२

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली

●

पहली बार : १९७२
मूल्य
रु० ६.००

मुद्रक
नव साहित्य प्रिंटर्स
दिल्ली

पाठकों से

आज हमारे सामने सबसे बड़ी समस्या यह है कि हम अपने जीवन को कैसा बनावें और एक नागरिक के रूप मे क्या-क्या काम करें, जिनसे हमारा समाज और राष्ट्र ऊंचा उठे।

इस दिशा की प्रेरणा देनेवाली सामग्री आपको इस पुस्तक में मिलेगी। 'मंगू भैया' में आप सीख की कहानियां पढ़ेंगे, 'मुरब्बी' में प्रेम की महिमा देखेंगे, 'हुआ सबेरा' में मिल-जुलकर काम करने की शिक्षा पायंगे, 'भगवान के प्यारे' में भगवदभक्ति का पाठ पढ़ेंगे, 'विनोबा के पावन प्रसंग' में सेवा की झांकी पायंगे, 'आनबान के रखवाले' में बहादुरी की घटनाएं पढ़ेंगे, 'सबेरे की रोशनी' में बड़ी ही विचार-प्रेरक कहानी और 'काला पानी' में वहां के रहनेवालों का हाल पढ़ेंगे। इन सबकी भाषा बड़ी ही सरल और सुबोध है।

हमें पूरा विश्वास है कि इस पुस्तक को पढ़कर सबको लाभ होगा।

—सम्पादक

विषय-सूची

मंगूभैया

: १ :

लड़नेवाले भाई-बहन

"मंगूभैया आ गए! मंगूभैया आ गए!" चौपाल में बैठे सब लोग खुशी से चिल्ला उठे।

मंगूभैया रोज शाम को चौपाल आते हैं और वहां पर बैठे हुए लोगों को नई-नई कहानी सुनाते हैं। इसीलिए उन्हें देखते ही लोग खुशी से उछल पड़ते हैं।

अपनी चोटी को बल देते, मुस्कराते, झूमते, मंगूभैया सबके बीच में आकर बैठ गए। मंगूभैया के बैठते ही सब चुप होगए। मंगूभैया ने कहा, "ओहो, आज तो चौपाल में बच्चे भी बहुत आये हैं। अच्छा, मैं आज लड़नेवाले भाई-बहनों की कहानी सुनाऊंगा।"

यह सुनकर बच्चे खुश होगए और मुस्कराकर एक-दूसरे की ओर देखने लगे।

मंगूभैया ने कहा—लो भाई, सुनो! भैया-दूज के दिन की बात है। सात बरस का बालक कोमल जैसे ही अपने घर से निकला कि गली के लड़के आगए और लगे उसे चिढ़ाने—"वह आया दो टीकेवाला! दो

टीके वाला ! गधे के सिर पर दो टीके !"

बात यह थी कि कोमल की दो बहनें हैं—सिंदू और बिंदू। दोनों बहनों में झगड़ा था। इसलिए दोनों ने कोमल के अलग-अलग टीके लगाये थे।

कोमल को दोनों बहनों पर बड़ा क्रोध आया। यदि वे उसके दो टीके न लगातीं तो लड़के उसे क्यों चिढ़ाते ! उसने टीके मिटाने के लिए जैसे ही अपना हाथ उठाया कि सिंदू और बिंदू ने, जो उसीके साथ आई थीं, उसके दोनों हाथ पकड़ लिये। सिंदू ने कहा, "अगर तू मेरा लगाया हुआ टीका मिटायेगा तो मैं तुझे मारुंगी।" बिन्दू ने कहा, "अगर मेरा टीका मिटायेगा तो मैं तुझसे कभी नहीं बोलूंगी।"

बेचारा कोमल उनकी बात सुनकर डर गया। उसकी आंखों में आंसू आगए। उसी हालत में वह बूआ के पास पहुंचा। बूआ को जब सारी बात मालूम हुई तो उन्होंने उसे समझाया कि इसमें परेशान होने की कोई बात नहीं है। तुम्हारे दो बहनें हैं, इसलिए दो टीके लगे हुए हैं।

कोमल ने कहा, "लेकिन बूआ, मोहन और रामू के भी तो दो-दो बहनें हैं, परन्तु उनके माथे पर एक ही टीका है। मेरे माथे पर इन्होंने दो टीके क्यों लगाये हैं ?"

बूआ सिंदू और बिंदू के झगड़े की बात जानती थीं। उन्होंने दोनों बहनों को बुलवाया और कहा, "मैं पहले तुम तीनों को भैया-दूज की कहानी सुनाती हूं, फिर तुम्हारे झगड़े का फैसला करुंगी।"

सिंदू, बिंदू और कोमल तीनों बूआ के पास बैठ गए।

बूआ ने कहानी कहनी शुरू की—

"सूरज और चंदा भाई-भाई हैं। एक बार दोनों में झगड़ा हो गया, जैसे सिंदू और बिंदू में होता रहता है। उन्होंने एक-दूसरे को खूब मारा और प्रतिज्ञा की कि वे एक-दूसरे की शकल कभी नहीं देखेंगे। सूरज और चन्दा की बहन है धरती। उसे इनके झगड़े के बारे में कुछ भी मालूम नहीं था।

"भैया-दूज का त्यौहार आया। धरती अपने भाइयों के टीका करने गई। उस समय उसे उनके झगड़े की बात मालूम हुई। उसने दोनों भाइयों को मनाने का प्रयत्न किया, परन्तु उन्होंने आपस में समझौता नहीं किया।

"धरती को इस झगड़े से बहुत दुःख हुआ और वह रोने लगी। शाम तक वह लगातार रोती रही। जब दोनों भाइयों से अपनी बहन का दुःख न देखा गया तो उन्होंने सुलह कर ली। अपनी बहन धरती को उन्होंने वचन

दिया कि साल में एक बार भैया-दूज के दिन हम दोनों भाई आसमान में दो क्षण के लिए शाम को अवश्य इकट्ठे हुआ करेंगे। उसी समय तुम टीका लगा दिया करना। धरती खुश हो गई। उसने झट भाइयों की आरती उतारी और उनके टीका कर दिया। फिर झगड़े को भूल-कर तीनों भाई-बहनों ने इकट्ठे बैठकर लड्डू

इस तरह तीनों आपस में मिल गए

खाये। झगड़ालू भाई अपनी प्यारी बहन के कारण आपसी झगड़ा भूल गए और उन्होंने धरती को भैया-दूज का उपहार दिया। इस तरह तीनों आपस में मिल गए। अच्छा, सिंदू-बिंदू, अब तुम बताओ कि तुम्हें क्या

चाहिए ?"

सिंदू और बिंदू ने कहा, "बूआ, हमें आपस में झगड़ना नहीं चाहिए और कोमल के माथे पर एक ही टीका लगाना चाहिए।"

कोमल अपनी बहनों की बात सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ और दोनों को उसने भैया-दूज का इनाम दिया।

... ...

इतना कहकर मंगूभैया थोड़ी देर के लिए चुप होगए। फिर बोले, "समझे भाइयो, प्रेम में इतना बल है। प्रेम से झगड़ा, कड़वाहट, वैर सभी कुछ आसानी से दूर किया जा सकता है। प्रेम पुण्य है, घृणा पाप है। भाईचारे में प्रेम बसता है, प्रेम में भगवान। झगड़े में तो शैतान का निवास होता है। कलह से हमारा ही बुरा होता है।"

मंगूभैया की बात सुनकर सबको बहुत हर्ष हुआ और बच्चों ने वादा किया कि वे आगे आपस में कभी झगड़ा नहीं करेंगे।

: २ :

भारत-मां के बेटे

दूसरे दिन मंगूभैया ने चौपाल में आते ही पूछा, "अच्छा, बताओ भारत-मां का पहला बेटा कौन था?"

चौपाल में बैठे लोग एक दूसरे की ओर देखने लगे। उन्हें मंगूभैया के सवाल का कोई जवाब नहीं सूझा। लोगों ने समझ लिया कि आज मंगूभैया फिर कोई ज्ञान की पुस्तक पढ़कर आये हैं और उन्हें नई बात बतानेवाले हैं। अक्सर मंगूभैया बड़ी-बड़ी, मोटी-मोटी किताबें शहर से लाकर पढ़ते रहते थे और गांव-वालों को अच्छी-अच्छी बातें बताते थे।

जब किसीने मंगूभैया की बात का जवाब न दिया तो मंगूभैया ने कहा, "अच्छा, तो आज मैं तुम्हें भारत के पहले और दूसरे बेटों के बारे में बताऊंगा। भारत मां का सबसे पहला बेटा था नेगरिटो। वह यहां लाखों बरस पहले आया था। फिर पश्चिमी एशिया से भारत-मां का दूसरा बेटा आया। उसका नाम आस्ट्रिक था। भारत-मां के घर आने पर उसका नाम निषाद पड़ा। उसी दिशा से भारत-मां के तीसरे बेटे का आगमन हुआ। यह बेटा द्रविड़ कहलाया। मां का चौथा बेटा किरात था, जो उत्तर तथा उत्तर-पूर्व से तिब्बत-चीन से आया था। इसके बाद भारत-मां के पांचवें बेटे आर्य का आना हुआ।

"इन पांचों बेटों के स्वभाव अलग-अलग थे। नेगरिटो को केवल खाने की चिन्ता रहती थी, इसलिए किसी दूसरी बात की ओर ध्यान न देकर अपना सारा

समय उसी चिन्ता में बिताता था। न उसे कपड़ों का शौक था, न घर में रहने की इच्छा। वन में मारा-

भारत-मां के बेटे
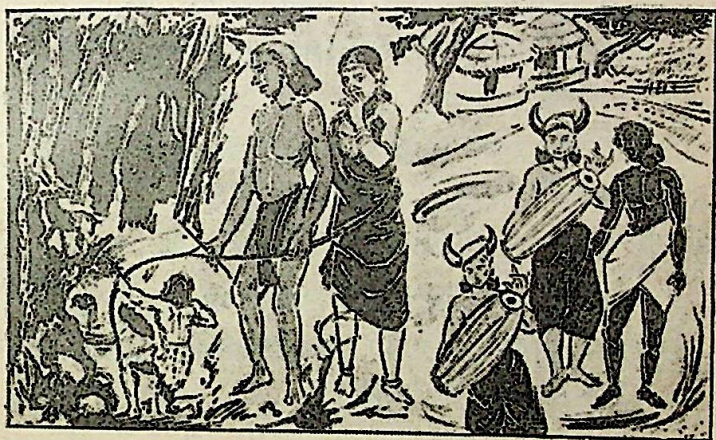
मारा फिरता था। एक दिन जंगल में भटकते-भटकते पता नहीं, वह कहां चला गया। उसके बाद फिर वह दिखाई नहीं पड़ा।

"निषाद और द्रविड़ का स्वभाव ऐसा नहीं था। वन में भटकते फिरना उन्हें अच्छा नहीं लगता था। उन्होंने जंगल में भटकने के बदले मैदानों में खेती करनी शुरू की। पशु पाले। घर बनाये। शादी-ब्याह की प्रथा डाली और सुखी जीवन बिताने लगे। धीरे-धीरे उनका परिवार बढ़ने लगा।

"किरात बेटे को जमीन पर रहना अच्छा नहीं लगा, इसलिए वह हिमालय पहाड़ की तराई में रहने लगा। उसने भी विवाह किया और हिमालय की तराइयों में अपना कुटुम्ब बसा लिया।

"भारत-मां का सबसे छोटा बेटा था आर्य। उसने अपने पहले आये भाइयों के सब गुण अपनाये। उसने रहने के लिए घर बनाया, अनाज के लिए हल चलाया, पशु पाले और शरीर ढकने के लिए कपास के पौधों से रुई इकट्ठी की और उससे कपड़े बनाये। उसने पारिवारिक जीवन बिताना अच्छा समझा और विवाह करके सुख से रहने लगा।"

चौपाल में बैठे एक आदमी ने पूछा, "आजकल भारत-मां के बेटे कहां हैं?"

"भारत-मां के बेटे अपनी सन्तानों के रूप में आज भी यहीं हैं, इसी भारतवर्ष में।" मंगूभैया ने उत्तर दिया।

"भारतवर्ष में कहां हैं?" दूसरे ने कुछ अचरज से पूछा।

"देखो, दक्षिण में रहनेवाले भारत-मां के द्रविड़ पुत्र की संतान हैं, हिमालय की तराई में तिब्बत के समीप रहनेवाले किरात-वंश के लोग हैं, आर्य-पुत्र की सन्तान उत्तर भारत, बंगाल आदि स्थानों में है।"

"तो क्या भारतवर्ष के सब लोग भाई-भाई हैं?" तीसरा पूछ बैठा।

मंगूभैया ने जवाब दिया, "हां, भारत के सब लोग, चाहे वे बंगाल के हों या मद्रास के, महाराष्ट्र के हों या आसाम के, गुजरात के हों या बिहार के, पंजाब के हों या उत्तरप्रदेश के, सब भाई-भाई हैं; क्योंकि हम सब भारत की प्रथम संतान द्रविड़, किरात, आर्य की संतानें हैं और हमें अपने पूर्वजों को सुखी रखने के लिए हमेशा मिलकर ही रहना चाहिए।"

: ३ :

भाषा-बिटिया

तीसरे दिन जब मंगूभैया चौपाल में आये तो सब पूछने लगे, "भैया, आज कौनसी कहानी होगी?"

मंगूभैया ने कहा, "आज मैं भाषा-बिटिया की कहानी सुनाऊंगा। भाषा-बिटिया के बारे में यह बात ध्यान में रखने की है कि उसकी वंश-परम्परा पिता के बदले माता से चली है। हम लोगों में वंश-परम्परा पिता से चलती है।

"हजारों साल पहले लोग आपस में इशारों से अपने मन की बात कहा करते थे, वैसे ही जैसे गूंगे

अब भी किया करते हैं। उन्हीं इशारों में बात करने वाले लोगों के बीच कुछ समय बाद एक सुन्दर-सी लड़की का जन्म हुआ। लोगों ने इस लड़की के जन्म की खूब खुशियां मनाईं, क्योंकि उन्हें इशारे के बदले मुंह से कुछ कह सकने की शक्ति मिल रही थी। इस
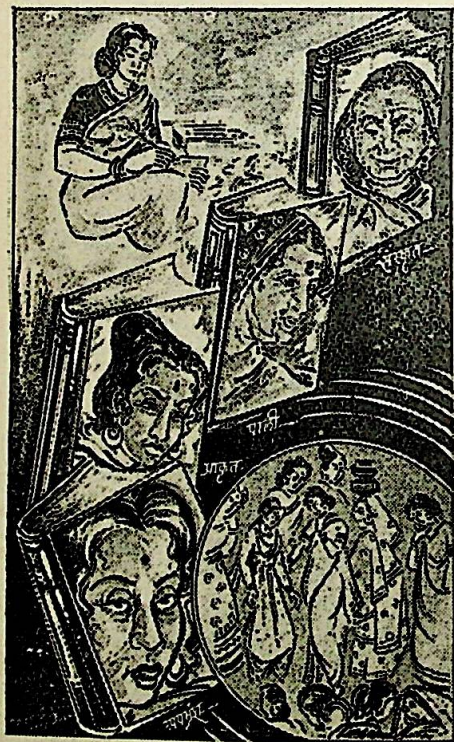
संस्कृत और उसकी बेटियां

लड़की का नाम रखा गया—भाषा। भाषा-बिटिया ने ही सबको सबसे पहले बोलना सिखाया। भाषा जब जवान हुई तो उसने वेद लिखे। फिर उसका विवाह हुआ और उसकी एक पुत्री हुई, जिसका नाम 'संस्कृत' रखा गया।

"संस्कृत जब विवाह के योग्य हुई तो उसका विवाह

कर दिया गया। संस्कृत की पुत्री का नाम पाली रखा गया। पाली से प्राकृत और प्राकृत से अपभ्रंश का जन्म हुआ। अपभ्रंश का परिवार बहुत फूला-फला। उसकी चौदह कन्याएं हुईं, जिनके नाम हिन्दी, गुजराती, मराठी, उड़िया, बंगला, तामिल, तेलगू आदि रखे गए।"

चौपाल में बैठे लोग में से एक ने कहा, "द्वारकादादा के यहां भी चौदह लड़कियां हैं।"

"हां, द्वारकादादा के घर में भी चौदह लड़कियां हैं।" मंगूभैया ने अपनी बात को जारी रखते हुए कहा, "परन्तु द्वारकादादा के वंश की लड़कियों और भाषा के वंश की लड़कियों में बड़ा अन्तर है। द्वारकादादा के वंश की लड़कियों के घर वाले बड़े मेल-जोल से रहते हैं, उनमें एकता है, प्रेम है। उनके पास किसी चीज की कमी नहीं है। अच्छा खाते हैं, अच्छा पहनते हैं। उनके घर से हमेशा हँसने-बोलने की आवाजें आती रहती हैं। उन्हें देखकर किसका मन प्रसन्न नहीं होता! परन्तु भाषा के वंश की इन चौदह पुत्रियों में इतनी एकता नहीं है। कोई कहती है—हम बड़े हैं, कोई कहती है—हम।"

"भैया, उनमें एकता कैसे हो सकती है?" चंदू ने पूछा।

"सब एक-दूसरे को समान समझें, सब नम्र हो जायं। बस एकता हो जायगी। तब कैसी भी आंधी
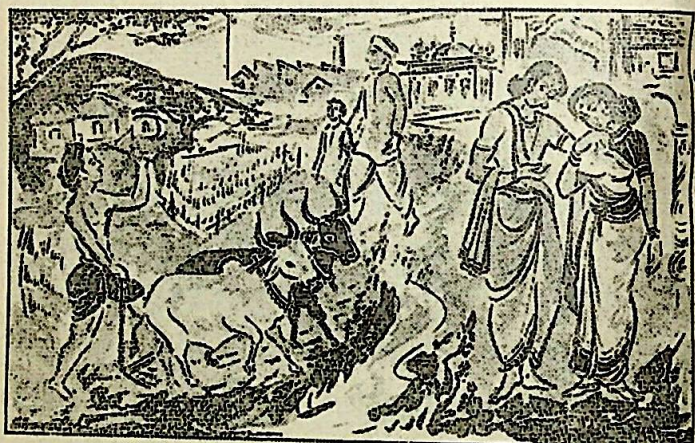
प्यार में और एकता में बड़ी ताकत होती है।

उन्हें नहीं उखाड़ सकती। प्यार में और एकता में बड़ी ताकत होती है।"

: ४ :

अगस्त्य ऋषि

चौथे दिन मंगूभैया जैसे ही चौपाल में आकर बैठे, उन्होंने कहा, "आज मैं तुम लोगों को अगस्त्य ऋषि की कथा सुनाऊंगा।"

चौपाल में उपस्थित लोग संभलकर बैठ गए।

मंगूभैया ने कहा, "अगस्त्य ऋषि उत्तर भारत के रहने वाले थे और बड़े विद्वान् थे। अपने ज्ञान के कारण वह बहुत प्रसिद्ध थे। उनके ज्ञान की चर्चा सुन कर दूर-दूर से लोग उनके पास अपने पुत्रों को पढ़ने के लिए भेजने लगे। अगस्त्य ऋषि के आश्रम में कई विद्यार्थी इकट्ठे होगए। ऋषि सब विद्यार्थियों को बड़े ध्यान से पढ़ाया करते थे। इन्हीं विद्यार्थियों में एक का नाम था विन्ध्य। वह बहुत ही होशियार था। अगस्त्य उसे बहुत चाहते थे।

आश्रम में बारह साल विद्या ग्रहण करने के बाद विंध्य घर गया और वहां की देखभाल में लग गया। लोग उसे विंध्याचल या विंध्य पर्वत कहने लगे। कई बरस बीत गए। एक दिन विंध्याचल ने सूरज को आज्ञा दी कि वह सिर्फ उसीके चक्कर काटा करे। सूरज उसकी बात सुनकर हँस पड़ा और छिप गया।

सूरज के व्यवहार को देखकर विंध्याचल को बहुत गुस्सा आया। उसने तय कर लिया कि वह सूरज के घमंड को चूर-चूर कर देगा। यह सोचकर उसने अपने शरीर को आकाश की ओर उठाना शुरू किया। वह चाहता था कि वह सूरज का रास्ता रोक दे। जब विंध्याचल बहुत ऊंचा होगया तो सूरज की किरणें दक्षिण भारत की ओर न पहुंच सकीं। वहां के लोग

बहुत दुखी हुए। सारे दक्षिण भारत में अंधेरा छा गया। बीमारी फैल गई। अकाल पड़ने लगा।

विंध्य ने अगस्त्य को साष्टांग प्रणाम किया
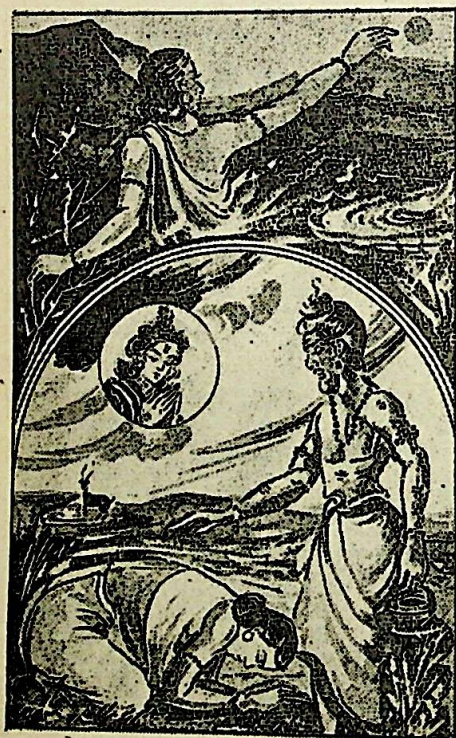
कुछ ही समय में यह बात अगस्त्य ऋषि के कानों तक पहुंची। उन्होंने फैसला किया कि वह अपने प्रिय विद्यार्थी की गलती का सुधार अपनी सेवा से करेंगे। वह दक्षिण की ओर चल पड़े।

जब वह विंध्याचल के घर के पास पहुंचे तो विंध्याचल ने अपने गुरु को देखा। गुरु का आशीर्वाद पाने के लिए वह उनके चरणों में साष्टांग प्रणाम करने के लिए लेट गया। अगस्त्य ऋषि ने उसे आशीर्वाद

देकर आज्ञा दी कि वह जबतक दक्षिण से यात्रा कर के वापस न लौटें, वह इसी प्रकार धरती पर लेटा रहे। विंध्य ने गुरु की आज्ञा पूरी करने का वचन दिया। अगस्त्य ऋषि दक्षिण की ओर चले गए। फिर कभी वापस नहीं आये।

"वापस क्यों नहीं आये ?" भोलाराम ने पूछा।

"इसलिए कि विंध्याचल फिर खड़ा होकर आकाश की ओर न बढ़ने लगे। यदि विन्ध्याचल उठ खड़ा होता तो दक्षिणवालों को फिर कष्ट सहना पड़ता।"

पेटूराम ने कहा, "अगस्त्य ऋषि को दक्षिण में बड़ा कष्ट हुआ होगा ?"

सबने अचरज से उन्हें देखा। मंगूभैया ने पूछा, "क्यों ?"

पेटूराम बोले, "उत्तर में तो अगस्त्य ऋषि रोटी खाते होंगे, दक्षिण में उन्हें चावल खाने पड़े होंगे।"

पेटूराम की बात सुन सब हँस पड़े। जब हँसी रुकी तो मंगूभैया ने कहा, "दूसरों के सुख के लिए दुख सहना पड़े तो उसे सह लेना चाहिए। यही अगस्त्य ऋषि ने किया। आखिर हम सब भाई हैं। हम चाहें उत्तर में रहते हों, चाहे दक्षिण में, हमें एक-दूसरे की मदद करनी ही चाहिए। यही तो इंसानियत है, अच्छाई है, सुख है और इसी परमार्थ में भगवान रहते हैं।"

: ५ :

हम सब भारती हैं!

पांचवें दिन जब मंगूभैया चौपाल में आये तो लोगों ने शोर मचाकर पूछना शुरू किया कि आज किस ऋषि की कहानी सुनायेंगे ? मंगूभैया ने सबको चुप होने का इशारा किया। लोग धीरे-धीरे शांत हो गए। मंगूभैया ने कहा, "आज मैं किसी ऋषि-मुनि की कहानी नहीं सुनाऊंगा। आज मैं भारती की कहानी सुनाऊंगा।"

श्यामू ने पूछा, "क्या यह किसी नेता का नाम है ?"

मंगूभैया हँस दिये। उन्होंने कहा, "नहीं, यह किसी नेता का नाम नहीं है।"

"तो फिर ?" रामखेलावन चाचा ने पूछा।

मंगूभैया ने कहा, "यह सब आपको कहानी सुनने के बाद मालूम हो जायगा। हां, एक बात जरूर है, आप सब उसको जानते हैं। वह आप लोगों के साथ ही यहां बैठा हुआ है।"

मंगूभैया की बात सुनकर सब एक-दूसरे का मुंह देखने लगे, किन्तु उन्हें कोई नया आदमी दिखाई नहीं दिया।

संगूभैया ने कहना शुरू किया—बात सुंदरनगर की है। सुन्दरनगर में बंगाल, मद्रास, महाराष्ट्र, पंजाब आदि सभी प्रान्तों के लोग रहते थे। उस शहर की एक खास बात यह थी कि वहां कोई सराय नहीं थी। यदि कोई आदमी बाहर से आता तो जिस प्रांत का होता, उस प्रांत के निवासी उसे अपने घर ठहरा लेते और उसका आदर-सत्कार करते।

एक दिन शाम को वहां एक मुसाफिर आया। स्टेशन पर उतरते ही उसने सोचा कि कहीं-न-कहीं ठहरने का इंतजाम करना चाहिए, जिससे रात आराम से कट जाय। उसने बोझी से किसी सराय की ओर चलने के लिए कहा। बोझी ने उसे बताया कि शहर में कोई सराय या होटल नहीं है। मुसाफिर को बोझी की बात सुनकर अचरज भी हुआ और चिन्ता भी। बोझी ने उसे परेशान देखकर समझाया कि वह किसी के घर रात काट ले। कोई भी उसे रात-भर ठहरने के लिए जगह दे देगा।

बोझी की बात सुन वह मुसाफिर अपना थैला और बिस्तर ले शहर की ओर चल पड़ा।

शहर पहुंचकर उसने एक मकान का दरवाज़ा खटखटाया। थोड़ी देर बाद मकान का दरवाज़ा खुला और एक बंगालीबाबू धोती-कुरता पहने बाहर आये।

उन्होंने पूछा, "आप कौन हैं ?"

मुसाफिर ने उत्तर दिया, "मैं मुसाफिर हूं। रात भर ठहरने के लिए जगह चाहता हूं।"

बंगालीबाबू ने मुसाफिर को ऊपर से नीचे तक देखा और समझ गए कि यह आदमी बंगाली नहीं है। फिर भी उन्होंने पूछा, "तुम बंगाली नहीं हो न ?"

"नहीं।" उस मुसाफिर ने कहा, "मैं बंगाली नहीं हूं, एक भारती हूं।"

"तो हमारे घर में तुम्हारे लिए जगह नहीं है। यहां सिर्फ बंगालियों के लिए स्थान है।"

मुसाफिर ने पूछा, "ये बंगाली कौन होते हैं ?"

उन्होंने उत्तर दिया, "जो बंगाल में रहते हैं वे बंगाली होते हैं।"

"बंगाल कहां है ?" मुसाफिर ने फिर पूछा।

"तुम्हें इतना भी नहीं मालूम ! बंगाल भारत में है और कहां है ?"

मुसाफिर ने कहा, "मैं भी भारती हूं, फिर आप मुझे जगह क्यों नहीं देते ?"

बंगालीबाबू ने कोई उत्तर नहीं दिया और जोर से दरवाजा बंद कर दिया।

मुसाफिर ने जाकर दूसरे घर का दरवाजा खटखटाया। यह एक मद्रासी का घर था। मद्रासी सज्जन

बाहर आये और पूछा, "क्या बात है ?"

"मैं रात भर ठहरने के लिए जगह चाहता हूं ।"

"क्या तुम मद्रासी हो ?"

मुसाफिर ने कहा "मैं भारती हूं ।"

"हमारे घर में सिर्फ मद्रासी ठहर सकता है ।" मद्रासीबाबू ने कहा ।

"मद्रास कहां है ?" मुसाफिर ने पूछा ।

"मद्रास दक्षिण में है ।"

"क्या वह भारत में नहीं है ?"

"भारत में नहीं तो क्या अमरीका में है ?" मद्रासी सज्जन ने कुछ नाराज़ होकर कहा ।

"फिर आप मुझे क्यों नहीं ठहरने देते ?"

मद्रासी सज्जन से कुछ उत्तर न बन पड़ा । उन्होंने दरवाज़ा बंद कर लिया और अन्दर चले गए ।

वह मुसाफिर इसी प्रकार मराठी, पंजाबी, गुजराती, उत्तरप्रदेशी, मध्यप्रदेशी आदि सबके घर गया, परन्तु किसीने उसे अपने घर में नहीं ठहरने दिया ।

दूसरे दिन बंगालीबाबू ने यह पता लगाना चाहा कि आखिर उस मुसाफिर को किसने अपने घर में जगह दी। अतः वह किसी-न-किसी बहाने सबके घर हो आए, परन्तु उस मुसाफिर का कहीं पता न लगा। उन्हें

थोड़ी चिन्ता भी हुई कि बेचारा रातभर न जाने कहां रहा होगा।

बंगालीबाबू उसके बारे में सोच ही रहे थे कि उनका लड़का दौड़ता हुआ आया और बोला, "बाबा-बाबा, पीपल के पेड़ के नीचे एक आदमी खड़ा है, जो सब भाषाएं बोलता है। चलो, तुम भी उसे देख आओ।"

बंगालीबाबू अपने बेटे को साथ लेकर वहां गये। पीपल के पेड़ के नीचे काफी भीड़ इकट्ठी थी। भीड़ को चीरते हुए जब बंगालीबाबू उस अनोखे आदमी के पास पहुंचे तो एकदम अवाक् रह गए। यह वही आदमी था, जो कल रात रहने के लिए जगह मांग रहा था। वह मुसाफिर सबसे अलग-अलग भाषाओं में बात कर रहा था। एक पंजाबी महोदय ने कहा, "मुसाफिरजी, आप मेरे घर चलकर रह सकते हैं।"

मुसाफिर ने कहा, "जी, मैं पंजाबी नहीं हूं, मैं भारती हूं।"

पंजाबीबाबू को रात की घटना याद आगई। वह लज्जित हो गए। इसी प्रकार बंगाली, गुजराती, मराठी आदि सभी लोगों ने उस मुसाफिर को अपने घर में ठहरने के लिए कहा, परन्तु उस मुसाफिर ने किसीके घर पर ठहरना स्वीकार नहीं किया। जैसे-

जैसे वह मुसाफिर किसीके घर जाने से इन्कार करता, वैसे-वैसे लोग उसे और अधिक बुलावा देते, क्योंकि जिसके भी घर वह मुसाफिर ठहरता, उसका मान बढ़ जाता।

अंत में मुसाफिर ने कहा, "मैं उसके घर जा
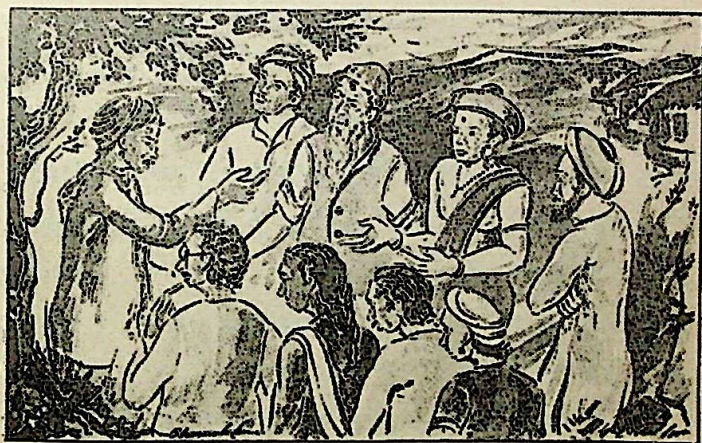
हम सब भारती हैं !

सकता हूं जो पहले भारती है—फिर बंगाली, गुजराती, मराठी आदि।"

सबने चिल्लाकर कहा, "हमारे घर चलिये। हम भारती हैं। हमारे घर चलिये।"

कोलाहल को शांत करते हुए मुसाफिर ने कहा, "अब आप लोग सब भारती होगए, इसलिए मेरा

काम पूरा हो गया। मैं अब जाता हूं।"

यह कहकर मुसाफिर स्टेशन की ओर चल पड़ा। भीड़ भी उसके साथ चल पड़ी।

: ६ :

ब्राह्मण और हरिजन

छठे दिन मंगूभैया समय पर चौपाल नहीं पहुंचे। वह हमेशा समय पर पहुंच जाते थे, इसलिए लोग कुछ परेशान-से हो गए। जब काफी समय होगया, तो उन्होंने सोचा, शायद मंगूभैया आज नहीं आयेंगे। परन्तु जैसे ही लोग घर जाने के लिए उठे, मंगूभैया सामने से आते दिखाई पड़े। लोग उत्सुकता से उनकी ओर देखने लगे।

मंगूभैया अपनी जगह पर आकर बैठ गए और बोले, "भाइयो, मुझे क्षमा करना। आज बहुत देर हो गई।"

रामू चौधरी ने पूछा, "कहां रह गए थे, भैया?"

"रास्ते में एक जगह झगड़ा हो रहा था, उसी को सुलझाने में देर हो गई।" मंगूभैया ने उत्तर दिया।

"झगड़ा हो रहा था? कहां पर? किससे? किसी

के चोट तो नहीं आई ?" बलराम ने खड़े होकर कई सवाल मंगूभैया से एक ही सांस में कर डाले।

मंगूभैया ने कहा, "आप लोग आराम से बैठ जाइये। आज कहानी के बदले में आपको आज के झगड़े की बात सुनाऊंगा। आज की घटना भी कहानी से कम नहीं है और हम लोगों के लिए एक शिक्षा भी है।"

इतना कहकर मंगूभैया सांस लेने के लिए दम भर के लिए रुक गए। फिर बोले, "भाइयो, रास्ते में कुछ ब्राह्मणों और हरिजनों में झगड़ा हो रहा था। ब्राह्मण कह रहे थे कि वे महान् हैं, पूज्य हैं और सबसे बड़े हैं। हरिजन कह रहे थे कि वे भी ब्राह्मणों से कम महान नहीं हैं। वे सबकी सेवा करते हैं, इसलिए वे सबसे श्रेष्ठ हैं। बस, इसी बात पर दोनों में तना-तनी होगई। ब्राह्मण कहने लगे कि एक-एक हरिजन को गांव से मार-मार कर भगाना चाहिए और हरि-जन कहने लगे कि ब्राह्मणों को गांव से निकाल देना चाहिए, तभी हरिजन गांव में सुख-चैन से रह सकते हैं।

जिस समय ये बातें हो रही थीं, मैं वहां पर पहुंचा। मैंने उन्हें शांत कराया और उनसे कहा कि मेरी ननिहाल में पांच ब्राह्मण रहते हैं, जो बिना पैरों के हैं और खूब दौड़ते हैं। वहीं पांच हरिजन भी रहते

हैं, जो बिना सिर के जी रहे हैं।

"यह समाचार सुनकर सब बहुत ही चकित हुए, और फिर एक साथ चिल्ला उठे, "यह झूठ है, सरासर झूठ है। ऐसा कभी नहीं हो सकता।"

मैंने उत्तर दिया, "वाह, मैंने उन्हें अपनी आंखों से देखा है और मुझे ऐसा लगता है कि आप लोगों में से बहुत-से लोग बिना सिर के और कुछ बिना पैर के जीना चाहते हैं।"

उपस्थित लोगों ने चिल्लाकर कहा, "यह सब झूठ है! यह सब झूठ है!"

मैंने कहा, "आदमी का सिर ब्राह्मण है, क्योंकि हमारा सिर ही बुद्धि का स्थान है; हाथ क्षत्रिय हैं, क्योंकि वे शक्ति हैं; पेट वैश्य है, क्योंकि सारे शरीर का लेन-देन वहीं से होता है और पैर शूद्र हैं, क्योंकि वे सेवा करते हैं और पूरे शरीर को संभाले रहते हैं। जो ब्राह्मण कहते हैं कि वे शूद्रों या हरिजनों को गांव से निकाल देंगे, उन्हें अपने शरीर की सेवा करनेवाले पैरों को काटकर फेंक देना चाहिए। इसी प्रकार जो हरिजन कहते हैं कि वे ब्राह्मणों को गांव से निकाल कर ही दम लेंगे, उन्हें अपने सिर को काटकर अलग कर देना चाहिए। जिस प्रकार शरीर में सिर, धड़, हाथ, पैर सभीका महत्व है, उसी प्रकार हमारे समाज

में भी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सभीका अलग-अलग महत्व है। किसीको भगाकर या हटाकर आप सुख से नहीं जी सकते। मनुष्य ही नहीं, पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, फूल-पत्ते, सभी का इस संसार में अपना-अपना महत्व है।

जाति से न कोई छोटा है, न बड़ा।

"आज के आजाद भारत में न कोई जात-पांत के कारण बड़ा है, न छोटा। जो अच्छे काम करता है, वही बड़ा है, चाहे वह ब्राह्मण हो या हरिजन। ब्राह्मण और हरिजन दोनों ही मनुष्य हैं और मनुष्य मनुष्य से घृणा करे, इससे अधिक मूर्खता की बात क्या हो सकती है! हम जबतक एक नहीं होंगे, हमारा देश

कैसे शक्तिशाली होगा ?"

इतना कहकर मंगूभैया चुप होगए ।

"फिर क्या हुआ ?" चौधरीजी ने पूछा ।

"फिर उन लोगों की समझ में मेरी बात आगई और उन्होंने वादा किया कि वे कभी आपस में नहीं लड़ेंगे ।"

: ७ :

सबसे बड़ी शक्ति

सातवें दिन मंगूभैया ने कहानी शुरू की—

एक गांव था, ऐसा ही जैसा कि अपना है । उसमें हिन्दू, मुसलमान और ईसाई जाति के लोग रहते थे । हिन्दू, मुसलमान और ईसाइयों में भी भिन्न-भिन्न सम्प्रदाय को माननेवाले लोग थे । जैसे हिन्दुओं में कुछ शिव के भक्त थे तो कुछ विष्णु के, कुछ देवी के । मुसलमानों में सुन्नी मुसलमान थे तो शिया मुसलमान भी थे । इसी प्रकार ईसाइयों में भी कुछ रोमन कैथोलिक थे तो कुछ प्रोटेस्टेंट सम्प्रदाय के माननेवाले थे ।

गांव बहुत अच्छा था । ज़मीन खूब उपजाऊ थी । गांव के किनारे ही नदी बहती थी, जिससे लोगों को पानी की तकलीफ नहीं होती थी। गांव में कोई बेकार

नहीं था। कुछ-न-कुछ काम सभी करते थे, जिससे उनकी रोजी चलती थी। इस तरह गांव के लोग सुखी थे। फिर भी एक बात थी, जिसके कारण वहां के लोग पूरी तरह सुखी नहीं थे।

"ऐसा क्या था, मंगूभैया ?" छोटेलाल ने पूछा।

—बात यह थी कि उस गांव में एका नहीं था। हिन्दू, मुसलमान और ईसाई सब एक-दूसरे को बुरा कहते थे।

"इस तरह तो गांव के सभी लोग बुरे होगए !" चौधरीचाचा ने मंगूभैया को टोकते हुए कहा।

—हां, इस तरह सभी लोग बुरे होगए, जबकि गांव के सभी लोग बहुत अच्छे थे, बहुत समझदार और भगवान् के भक्त। सभी मेहनती। खूब काम करते थे। हिन्दू मन्दिर जाते, पूजा करते। मुसलमान मस्जिद जाते और नमाज़ पढ़ते। ईसाई गिरजाघर जाते और ईसा को याद करते। परन्तु पूजा-घरों में जाकर भी वे एक-दूसरी जाति वालों को मारने-पीटने या झगड़ने की बातें किया करते थे, जिससे गांव में अकसर लोगों में मेल-मिलाप का अभाव रहता था। कभी-कभी छोटे-मोटे झगड़े भी हो जाते थे।

एक दिन रमजान जुलाहे के घर पर कोई एक चिट्ठी छोड़ गया। लिखा था—आज रात तुम्हारे घर

डाका पड़ेगा। रमजान गांव का सबसे बड़ा जुलाहा था। कुछ पैसे भी उसने जमा कर रखे थे। वह इस चिट्ठी को पढ़कर घबरा गया। गांववालों के पास पहुंचा, परन्तु सिवा मुसलमानों के उसकी सहायता करने के लिए कोई भी राज़ी नहीं हुआ। वैसे डर सभी लोग गए।

रात हुई। डाकू आये। वे संख्या में इतने अधिक थे कि गांव के मुसलमान उनका सामना न कर सके। डाकू रमजान को और उसके पड़ोसी मुसलमानों को लूटकर चले गए।

जाते-जाते वे बिहारी बनिए के घर चिट्ठी छोड़ गए कि आठ रोज के अन्दर तुम पांच हजार रुपये जंगल में पहुंचा दो, नहीं तो तुम्हारा घर लूट लिया जायगा। बेचारा बिहारी घबरा गया। वह गांव के लोगों के पास मदद के लिए दौड़ा, परन्तु सिवा हिन्दुओं के उसकी मदद के लिए कोई तैयार न हुआ। मुसलमान कहते थे कि तुमने हमारी मदद नहीं की, हम तुम्हारी मदद क्यों करें? ईसाई कहते थे, हम अपनी जान मुसीबत में क्यों डालें?

बिहारी पांच हजार रुपये कहां से देता! उसकी दूकान कुल दो हजार रुपयों की थी। आखिर आठ रोज बाद डाकू आये और बिहारी को लूटकर चले

गए। गांव के हिन्दुओं ने उसकी सहायता की, परन्तु उससे कुछ लाभ नहीं हुआ। डाकू संख्या में बहुत अधिक थे और उनके पास बंदूकें थीं। गांव के हिन्दुओं के पास लाठियां ही थीं, बस।

इसके बाद एक सप्ताह भी शांति से नहीं बीता था कि जोसेफ के घर उसी तरह की चिट्ठी आई, जैसी रमजान के घर आई थी। जोसेफ दौड़ता-दौड़ता ईसाइयों के पास गया। उन्होंने कहा, हम लोग तो बहुत थोड़े से हैं। गांव में हिन्दू और मुसलमानों की संख्या बहुत थो; परन्तु वे उनसे नहीं लड़ सके तो फिर हम उनसे कैसे जीत सकेंगे? जोसफ ने कहा, हमें उनसे मदद लेनी चाहिए, परन्तु सब जानते थे कि उन्हें हिन्दू और मुसलमानों से कोई सहायता नहीं मिलेगी, क्योंकि उन्होंने हिन्दू-मुसलमानों की कोई सहायता नहीं की थी। ईसाइयों का पादरी हिन्दू-मुसलमानों के मुखिया लोगों से मिला भी, परन्तु उससे कोई लाभ न हुआ। उसे उन दोनों ने टका-सा जवाब दे दिया। आखिर जोसेफ का घर भी रात में लूट लिया गया।

रमजान, बिहारी और जोसेफ के घर लुट गए। हिन्दू, मुसलमान और ईसाइयों ने एक-दूसरे की मदद नहीं की, परन्तु सबके मन में एक बात बराबर उठती रही कि यदि सब मिलकर लड़ते तो गांव में किसीका

नुक़सान न हुआ होता। हिन्दू जब आपस में बातचीत करते तो यही कहते। ईसाई भी यही कहते। लोग अपनी गलती समझते थे, परन्तु चुप थे। सोचते थे, जो पहले समझौते की बात उठायेगा, वह कमजोर और कायर समझा जायगा।

एक दिन सारे गांव में सन्नाटा छा गया। गांव के सब घरों पर रात को डाकू बड़े-बड़े कागजों पर यह लिख़कर चिपका गए कि तीन रोज के अन्दर पूरा गांव पचास हजार रुपये दे, नहीं तो सारे गांव को चौथे दिन जला दिया जायगा।

सब लोग घबरा गए और चिन्ता में पड़ गए। वैसे पचास हजार रुपये गांववाले दे सकते थे, परन्तु इस तरह तो डाकू हमेशा सताते रहेंगे और उनसे रुपया लेते रहेंगे।

आखिर गांव के दो बूढ़े चौधरी रामचरण और जुम्मन चाचा मिले। उन्होंने तय किया कि इस बार की भलाई इसीमें है कि सब लोग बहादुरी के साथ मिलकर डाकुओं का सामना करें और उन्हें एक पैसा भी न दें। चौधरीजी और जुम्मन चाचा पादरी के पास गये और उससे भी सहायता देने के लिए कहा। ईसाई लोग भी डाकुओं का जंगलीपन देख चुके थे, अतः वे भी इस बात के लिए राजी होगए।

"चौथे दिन गांव के सब नौजवान रात को पहरे के लिए तैयार होगए। बड़े-बूढ़े भी लड़ने के लिए तैयार थे। कोई तीन बजे रात को डाकू आये। वे गिनती में पहले से भी अधिक थे, परन्तु गांव के लोग भी सब
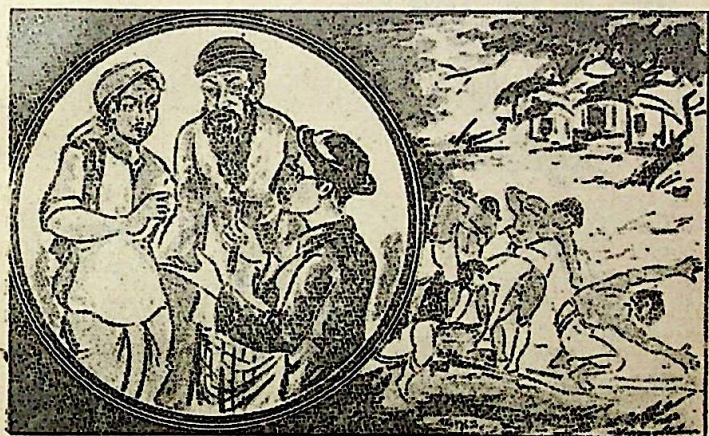
एकता में बड़ी शक्ति है।

मिलकर एक हो चुके थे। नौजवान गांव से काफी दूर हटकर पहरा दे रहे थे। जैसे ही डाकू गांव की ओर बढ़े, नौजवानों ने पीछे से हमला कर दिया। इधर बड़े-बूढ़े भी तैयार बैठे थे। वे भी निकल पड़े। औरतों ने जगह-जगह पत्थर इकट्ठे कर रखे थे, उन्होंने पत्थर बरसाने शुरू किये। डाकू इस अचानक हमले से घबरा गए और भाग खड़े हुए। नौजवानों ने उनसे

बंदूकें छीन लीं और जो पकड़े गए, उनकी खूब खबर ली।

तो भाइयो, अब आप समझ गए होंगे कि सबसे बड़ी शक्ति एकता में है। कहावत भी है, "एक चला मरने, दो चले मारने।"

मुरब्बी

पात्र

मुरब्बी — गांव का वड़ा व्यापारी,
नंदू, श्रीधर पांडे, हाजी — गाहक
मंगल — नौकर,
देवी — मुरब्बी का पोता
राधे — मुरब्बी का बेटा
मुनव्वर — मुरब्बी का मित्र, एक गरीब किसान
प्रभा — मुरब्बी के बड़े बेटे की बहू
घासवाली तथा कुछ दूसरे गांववाले

पहला अंक

दृश्य १

(एक छोटे-से कसबे का बाज़ार। इसी बाज़ार में मुरब्बी की दूकान है। इस समय बाज़ार में भीड़ है, लोगों के आने-जाने तथा सौदा लेने-देने की आवाज़ें उठती हैं। आवाज़ें कुछ साफ, कुछ उलझी हुई, कुछ धीमी और कुछ तेज़ हैं)

पहली आवाज़—राम-राम चौधरी, आज किधर चले ?

दूसरी आवाज़—चला क्या, लौंडिया के हाथ पीले करने हैं। सौदा-सुलफ लेने आया हूं। तू सुना, कहां जा रहा है ?

पहली आवाज (हँसकर)——मैं भी इसी चक्कर में हूं।

(दो आदमी टकरा जाते हैं)

तीसरी आवाज़——अरे, तैंने तो सड़क ही घेर ली। एक तरफ़ कूं खड़ा हो न।

चौथी आवाज़—अरे, देख के चल, सिर पे चढ़ा आवे है।

तीसरी आवाज़——अजी, नाराज़ क्यों होओ, गुरूजी ! आपको ही तो ढूंढूं था।

चौथी आवाज़——ओहो, वंशगोपाल है ! मका राजी तो हो ? बियाह कब का सूझा ?

तीसरी आवाज़——गुरू, वही तो पूछने आया हूं। (हल्की हँसी)

एक दूकानदार——अजी ओ शेख साब, अजी शेख साब !

शेख——क्या है ? ओहो, लाला राधेलाल ! आदाबअर्ज लाला साब...

लाला——आदाबअर्ज। मका ऐसी भी क्या बात है ? दुकान के आगे कूं निकले जाओ हो। क्या हाल-चाल है अनवर का ? हाफिज़जी भी नहीं दिक्खे। कपड़ा-वपड़ा नहीं लोगे। दिको तुम्हारे भरोसे पे ही बैठे हैं, शेखजी !

शेख---लालाजी, क्यों कांटों में घसीटो हो। तुम्हारा अगला नांवां ही नहीं चुका। क्या बताऊं...

लाला (बात काटकर)---अजी नांवां क्या मार में है? हम तो समझे, अपने घर में रखा है। शेखजी, यह क्या कहा तुमने जी? सारी दुकान थारी है। नहीं आये, तो सब साथ आ जायंगे। शादी है न? थारी कसम, रफल, लट्ठा, बेल थारे वास्ते लाया हूं। ला रे सतप्रकाश, डी-वन और ५५५ का लट्ठा दिखा और दिके मकड़े का भी लेते आना और वह बक्स उतार ले। थारी कसम, शेखसाहब, किसी साले को हवा तक नहीं दिखाई।

(फिर कुछ आदमी टकरा जाते हैं। सामान गिरता है। बरतन लुढ़कते हैं।)

सातवीं आवाज़---बच के लालाजी! अजी, जरा बचके चलो मियां साब! हां-हां, बचना...बचना...

आठवीं आवाज़---अर-र-र मार डाला! देखकर नहीं चले! लाट साब का बाप बन गया है! रुके भी तो नहीं, दिके बहुत अकड़े ना, सब ऐंठ निकाल दूंगा...

नवीं आवाज़---जाने दे चौधरी, जाने दे! अरे, आजकल दिन ही ऐसे हैं। भीड़-भड़क्के में लग ही जावे है!

शेख---हां-हां जाने दे, हँसी-खुशी के दिन हैं...

आठवीं आवाज़--जाने देने को मैं क्या सूली पर चढ़ाऊं हूं !

(सब हँस पड़ते हैं और शोर फिर गूंज में पलटता है और बढ़ता है। उसीमें मुरब्बी की करारी आवाज़ उठती है)

बैठूं क्या ? लौंडिया का बियाह है न...

मुरब्बी (ज़ोर से)--नंदू भाई, नंदू भाई होत। अरे, मका सुनेगा नहीं। यहां तो आ, यार !

नंदू--ओ हो, मुरब्बी ! राम-राम मुरब्बी !

मुरब्बी--राम-राम ! मका किधर भूल पड़े आज? हम तो सूरत को तरसते रहे हैं। आओ बैठो।

नंदू--बैठूं क्या ? लौंडिया का बियाह है न, बरतन

चाहिए।

मुरब्बी---हां, हां, क्या डर है ? अभी चलता हूं। और कपड़ा नहीं लोगे। तमाकू, चावल कुछ भी तो नहीं लिया।

नंदू---लूंगा क्यों नहीं ? थारे सिर बेफिक्कर हूं। पर आज बरतन देखने हैं।

मुरब्बी---तो क्या डर है ? थारी दुकान है। अरे ओ देवी, देवी होत ! कहां मर गया। अरे जा, नंदू भाई को सरजू कसेरे की दुकान पर ले जा। कहना, मुरब्बी ने कहा है, बढ़िया-बढ़िया बरतन निकाल दे। लो जाओ, नंदू चौधरी ! सब काम ठीक मिलेगा। मेरे यार, राम तेरा भला करे, कहने की देर है।

नंदू (हँसकर)---मुरब्बी की बात ही ऐसी है। अच्छा, राम-राम मुरब्बी !

मुरब्बी--राम-राम और हां, सुनना। जाती बेर होके जाना, समझा।

नंदू---अच्छाजी, अच्छा। (जाता है)

मुरब्बी---देख बे देवी, दलाली का ध्यान रखना। सुने है कि नहीं, कभी अंधे की तरह देखता रहे।

देवी---अच्छा।

(जाता है। दूसरे ग्राहक आते हैं)

श्रीधर पांडे—मुरब्बी, बढ़िया चावल चाहिए पांच

सेर । क्या भाव है ?

मुरब्बी—क्या कहा, भाव ! अजी, ले भी जाओ, गुरू ! घरवालों से भी कहीं भाव-ताव हो है ! मंगल, ओ मंगल, पीलीभींतवाले चावल तो लाना । गुरू आये हैं । हां, वही कोनेवाली बोरी है ।

श्रीधर पांडे—अजी मुरब्बी, भाव तो बताओ ।

मुरब्बी—साफ़-साफ़ कह दूं ? ढाई-पा कम तीन सेर का भाव है, लेकिन आपके लिए आध-पा कम तोल दूंगा । ओहो, हाजी करीमउद्दीन दिक्खे ! आओ हाजीजी !

हाजी—मुरब्बी, सलाम !

मुरब्बी—सलाम, हाजी साब ! खड़े क्यों रह गए? इंघे बैठो, इंघे । हां, क्या चाहिए ?

हाजी—चाहिए क्या । बढ़िया बासमती दिखला दो । बस, एक बार दिखा दो । बार-बार की बात मुझे अच्छी नहीं लगे ।

मुरब्बी—क्या बात कही, हाजी साब, तुमने ! क्या कभी खोटा माल दिया है ?

हाजी—नहीं, यह मैं कब कहता हूं !

मुरब्बी—तो फिर ऐसी बात क्यों कह दी ? थारे सहारे दुकान पर बैठा हूं । पूछ लो गुरू से, जो कभी उल्टी बात कही हो...यह देखो, यह है बासमती, देह

रादून की है। सूंघो ज़रा, खुशबू है, खुशबू, हाजी साब ! और कह देता हूं, कड़ाह में डालते ही गिरह-भर की न हो जाय, तो नाम फेर देना।

हाजी---देखूं जरा। खुशबू तो है, पर...

मुरब्बी---पर क्या ?

हाजी---कुछ नई मालूम दे है।

मुरब्बी (तिनककर)---क्या कहा, नई मालूम दे है ? वही बात है, राम तुम्हारा भला करे, जैसी रूह, वैसे फरिश्ते। हाजी साब, दस साल से तो मेरी दुकान में पड़ी है। कहे देता हूं, ऐसी बासमती दीवा लेकर ढूंढ़ो, तब भी ना मिलेगी...

हाजी---मुरब्बी, तुम तो नाराज हो गए।

मुरब्बी---नाराज़ क्या हो गए, बात ही आप ऐसी करो हो। दिक्खे शेखजी, तुमें तो गोद खिलाया है। क्या आज की बात है ? पैंसठ साल का हूं, तुम होगे तीस-पैंतीस के। जब थारे अब्बा जीवें थे, क्या नाम था उनका, बड़े भले थे, हां जी लल्लन मियां, क्या मजाल जो कभी किसी और दुकान पे चढ़े हों। दिक्खे एक दफा माल नहीं आया था, तो बोल्ले कि मैं तो दूसरे की दुकान का रास्ता ही नहीं जानता। तब चच्चा खुद जाकर बाज़ार से सौदा लाये। ऐसे थे वे दिन और आज तुम कहो हो, बासमती नई दिक्खे है ! यह चालबाजी थारे

साथ करूंगा ? मूंछ मुंड़ा दूंगा; कह दे कोई, बासमती पुरानी नहीं है ! राम थारा भला करे, सारे बाज़ार में दिखा लो । पर वह बात है...

हाजी—मुरब्बी, तुम भी क्या समझ बैठे ? मैं क्या तुम से बाहर हूं । अब्बा की तरह मैं भी इसे अपनी दुकान समझूं हूं । तोल दो न बीस सेर । जो अच्छी लगे, वह तोल दो । लौंडिया मेरी है तो क्या, पोती तो थारी है ।

मुरब्बी—दिक्खे बस, यह बात कही है दिल लगने की। तम बैठे देखते रहो और दिक्खे बारातवाले उंगली न चाटते रह जायं, तो कहना । भला थारी बदनामी क्या मेरी बदनामी नहीं है ? क्या मुझे बारातियों को नाराज़ करना अच्छा लगे है ? अच्छी चीज होगी, तो वे भी दौड़कर मुरब्बी को दुकान पे आयंगे । अब भी थारी दया से सात गांव के लोग भाग-भाग के आवे हैं ।

(नौकर आता है)

मंगल—अजी, बहूजी ने पुछवाया है, खाना कब खाओगे ?

मुरब्बी—ओहो, खाने की पड़ गई अभी से ! देखता नहीं, दम मारने की भी तो फुरसत नहीं है । जाकर कह दे, खाने बिना काम नहीं अटकेगा । मैं उठ्ठा, तो शादियां ही रुक जायंगी ।

(सब हँसते हैं)

श्रीधर पांडे (हँसते-हँसते)—मुरब्बी मज़ेदार आदमी है। लेकिन मुरब्बी, जीने के लिए खाना जरूरी है।

मुरब्बी—तो भी, गुरू, सांझ तक रुके रहने में कोई बात नहीं है। यकीन मानो, जमराज को अभी मेरी ज़रूरत नहीं है!

श्रीधर पांडे—जमराज को तुम्हारी क्या जरूरत होगी? उसके तो औलाद ही नहीं है जो शादी रचानी पड़े।

(फिर तेज हँसी उठती है और साथ ही मंच पर अंधेरा होने लगता है। एक बार एकदम अंधेरा हो जाता है, फिर रोशनी होने लगती है। सांझ की-सी रोशनी होती है। बाजार में अब शोर नहीं है)

मुरब्बी (थकानसूचक स्वर में)—ओफ्फ़ो! भई अब जान-में-जान आई है। ऐसा लगे है कि सारी दुनिया की शादियां अभी होंगी। खाना-पीना भी हराम हो गया और कितना ही कर लो, किसीकी आंट में नहीं आवे। अच्छा भाई मंगल, अब दुकान बढ़ाना शुरू कर। देख तो गाय लौटे भी देर हो गई। अंधेरा बढ़ा आवे है।

मंगल—अभी करूं, जी।

मुरब्बी—हां, हां, धीरे-धीरे कर ले। राम तुम्हारा भला करे, देवी भी है (पुकारकर) अरे देवी तू भी आ आई। मैं तब तक नांवां संभाल लूं। अरे, दीवा तो जला ला। दिक्खे इस आले में रख देना, भला। (रुपये-पैसे के खन-खनाने का स्वर। फिर मुरब्बी धीरे-धीरे जैसे अपने-आपसे बोलने लगते हैं) लोग कहते हैं, मुरब्बी इतना कमावे, उतना कमावे। कुल जमा में सौ रुपये भी नहीं आये। क्या बचेगा? राम तुम्हारा भला करे, मुश्किल से दस रुपये! (ज़ोर से) अरे हां देवी, ओ देवी! अरे, दलाली का क्या रहा?

देवी—बाबा, उन्होंने जमा कर दी है। सवेरे सब भिजवा देंगे।

मुरब्बी—भिजवा क्या देंगे, तू जा के ला। भिजवानेवाले और होते हैं। कितनी दफा कहा, पैसे के मामले में ज्यादा यकीन नहीं किया करे, पर समझ में नहीं आता। राम तुम्हारा भला करे, तुम कब समझोगे, क्या कमाकर खाओगे। जा चल, लेके आ।

देवी—अच्छा बाबा अभी लाता हूं।

(देवी जाता है, राधे आता है)

राधे—चच्चा, मैं कल शहर जाऊंगा।

मुरब्बी—फिर...

राधे—फिर क्या? तमस्सुकों की मयाद गली जा

रही है। नालिश करनी पड़ेगी। कोई साला लेके न देवे है। जरूरत के बखत पैर पकड़ ले, फिर उसके पीछे फिरो दौड़ते। तब तोते की तरह आंखें फेर लेवे हैं।

मुरब्बी—यही बात है। सब सालों पर दावा ठोकना चाहिए।

राधे—दावा तो ठोकूंगा ही, पर उन तमस्सुकों में एक तमस्सुक मुनव्वर का भी है।

मुरब्बी—मुनव्वर का भी है? क्या उसने अबतक रुपये नहीं दिये?

राधे—नहीं, अभी कहां दिये हैं? बखत पूरा होने-वाला है। और दो-चार दिन में वह दे देगा, ऐसी कोई उम्मीद नहीं है।

मुरब्बी—तो फिर मैं क्या करूं?

राधे—मैं तो कहने आया था। थारा यारबाश है। कल को कहोगे, पूछ्छा भी नहीं।

मुरब्बी (हँसकर)—इसमें यारबाश क्या करेगा? रुपये लिये हैं, तो देने होंगे। नहीं देता, तो नालिश करनी होगी।

राधे—तो फिर ठीक है। मैं कल जाकर वकील को सब कागज दे आऊंगा। वह दावा करता रहेगा।

(राधे जाता है। मुरब्बी जोर से बोल उठता है)

मुरब्बी—नालिश करेंगे, तो मुझसे क्या पूछते हैं?

'थारा यारबाश है, फिर कहोगे कि पूछ्छा भी नहीं !'
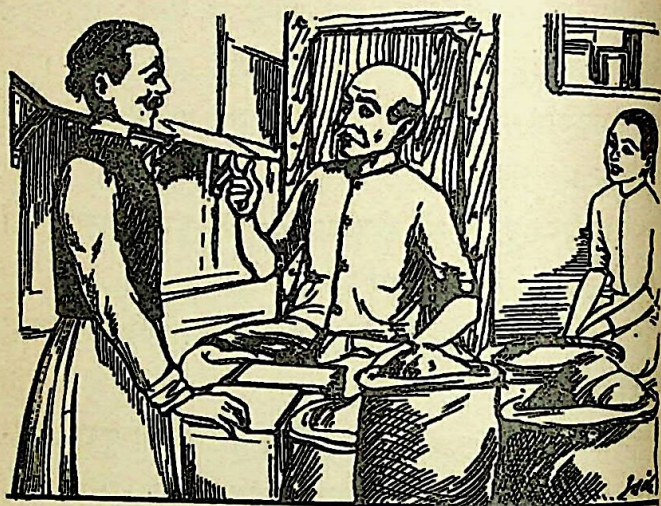
मुरब्बी—तो फिर में क्या करूं ?

पूछकर क्या लिया ? मुझसे कहलवाना चाहते थे। शर्म नहीं आई लाला को, अपने-आप नहीं सूझा। अपने बाप से भी छल करे हैं, लाला को पता नहीं कि मैं उसे तब से जानता हूं जब लाला पैदा भी नहीं हुए थे। गरीब किसान है, खेत्ती करके पेट पाले है, मुझे कितना माने है। झूठ-मूठ भी काम का पता लग जाता है, तो भागकर आता है। पार साल गंगा चढ़ आई थी, तो सारा गांव मन मारकर बैठ गया था, लेकिन वह दौड़ा-दौड़ा मेरे पास आया था।

(देवी आता है। रुपये देता है)

देवी---लो बाबा, ले आया दलाली।

मुरब्बी (चौंककर)---क्या !...अच्छा रुपये ले आया। क्यों रे देवी। तुझे याद है न। पारसाल मुनव्वर आया था। अरे जब गंगा चढ़ आई थी।

देवी---हां-हां, बाबा आया था। आपसे पूछा था कि गांव के लोग इस साल गंगा नहाने क्यों नहीं जा रहे हैं ?

मुरब्बी---हां-हां, तब मैंने कहा था कि जायं कैसे? गंगामाई चढ़ आई हैं। सब घाट बहा ले गईं ! पानी इतना गहरा है कि हाथी डूब जाय और किनारे इतने ऊंचे हैं कि उतरने का रास्ता नहीं है।

देवी---तब उसने कहा था। तो क्या हुआ साल-भर का त्योहार क्या यों ही छोड़ दोगे ? नहीं-नहीं। गंगा नहाना होगा।

मुरब्बी (सांस खींचकर)---तू नहीं जानता बेटा। वह ऐसा ही है। मंदिर का कुआं उसीने अपने हाथों से खोद्दा था। राम थारा भला करे, तब तो जवानी थी। हाथों में जान थी। राम थारा भला करे, रात-रात-भर मिट्टी खोद्दी है। मैंने उससे यही बात कही, तो बोल्ला वही हाथ अब भी हैं। रही जान की बात; सो वह हाथों में नहीं होत्ती, मन में होत्ती हैं। दिक्खे वह फावड़ा और खुरपा, जिनसे मंदिर का

कुआं खोद्वा था, अभी तक रक्खे हैं।

(मंगल अबतक उनकी बात सुनकर वहीं
आ गया है। एकदम बोल उठता है।)

मंगल—वह तो मुझे भी याद है। मैं भी था। दिक्खे आपने कहा था कि तो तू कहता है, कि हम-तुम चलकर गंगा के घाट पर पैड़ियां बना दें। उनने एकदम कहा था कि वो तो बनानी ही पड़ेगी। मुरब्बी क्या यों ही बन गए हो ? थारे राज में नहान न हो, यह कैसे होगा ?

(मुरब्बी भावों में डूब जाते हैं। ऐसे बोलते
हैं जैसे अपने से बातें करते हों।)

मुरब्बी—और फिर मेरे साथ वह घाट पर गया। और लोग भी थे। सबने मिलकर छोट्टी-छोट्टी पैड़ियां बना दी थीं। हमेशा की तरह गांववाले नहाने गए थे, सिर्फ मुनव्वर की बदौलत। और उसी मुनव्वर पर राधे नालिश करेगा...राधे नालिश करेगा, नालिश करेगा।

(देवी और मंगल एक दूसरे को देखते हैं।
मंगल बोल उठता है।)

मंगल—अब तो खाना ले आऊं ?

मुरब्बी (चौंककर)—ऐं...

मंगल—खाना ले आऊं ?

मुरब्बी—हां-हां, ले आ। सबेरे का भुक्खा हूं। देख, बड़ी बहू से कहकर परावठों में अजवायन डलवा देना और चूरन न भूलना।

मंगल—अच्छा जी। (जाने को मुड़ता है।)

मुरब्बी—चला जावे है। मेरे यार! बात तो सुन लिया कर। दिक्खे मनक्का खतम हो गई हैं। छोटी बहू से कह देना, दे देगी। भूलना मत, समझा? जा दौड़ जा। भूख लग रही है।

मंगल—अभी जाता हूं। (जाता है)

मुरब्बी—देवी, तू भी जा। तू अब क्या करेगा? दिक्खे...जरा ठहर...

(सहसा घासवाली आती है!)

घासवाली—मुरब्बी घास लोगे!

मुरब्बी (एकदम)—नहीं। (फिर कुछ सोचकर) घासवाली, ओ घासवाली, सुनती नहीं। अबतक तेरी घास नहीं बिकी? जा, घर डाल आ। लौटती बार पैसे ले जाना, भला। राम तेरा भला करे, रोज दो गठरी घास डाल जाया कर।

घासवाली—आजकल घास कहां मिले है? यो एक ही मुश्किल से लाई हूं। पेट जो भरना है। भगवान बरसता ही नहीं।

मुरब्बी—बरसेगा, भगवान जरूर बरसेगा। और

भगवान क्या करे ? करम भी तो हम खोट्टे करने लगे हैं।

घासवाली—हां, मुरब्बी, करम तो सभी खोट्टे करे हैं।

मुरब्बी—हां, जा, डाल आ और एक लावे, तो एक ही ले आया कर, जा।

घासवाली—अच्छा जी। (जाती है)

मुरब्बी—देखा देवी, न्यार की कितनी मुसीबत है। अबकी बार मुनव्वर के खेत में कुछ नहीं हुआ, नहीं तो हर बार कहला भेजता था कि न्यार पर पैसे न डालना। क्या हो गया, जो रुपये नहीं दिये ? दूसरा तमस्सुक पलट देता। यह तो अपने हाथ की बात है। पर तेरे चाचा कहवें हैं, मैं नालिश करूंगा। अच्छा भाई, कर लो नालिश। मैं तो कहूंगा नहीं और क्यों कहूं ? यह भी क्या कहने-सुनने की बात है ?...

(नौकर जाता है)

मंगल—लो जी, खाना ले आया। खा लो।

मुरब्बी—यहां रख दे और पानी ले आ, हाथ-पैर तो धो लूं।

मंगल—अभी लाया। (बाहर से पानी लाता है) ...लो...जी।

(मुरब्बी हाथ-पैर धोते हैं, फिर थाली सरकाते

हैं। खाने का स्वर)

मुरब्बी (खाते-खाते)--अरे, जा बेटा देवी। तँ भी खा-पी आ।

देवी--मैं तो खा आया, बाबा।

मुरब्बी--तो फिर तबतक पैसे गिन-गिनकर थैली में डाल ले और अपने बाप को दे आ। और राम तेरा भला करे, चौकी उठाकर अंदर रख दे। जा बेटा, जल्दी कर। और ये कुत्ते भी तो डटे हैं। जाने कैसे बखत सूंघ लेवे हैं (कुत्ते को पुकारते हैं) तो...तो ...ले, तो, अरे ले भी...वह देख, तेरे पैर के पिच्छे पड़ा है। हट, हट, परे हट, बस...

(मुनव्वर आता है। गांव का बूढ़ा किसान है। गरीब है पर आंखों में तेज है)

मुनव्वर—रोट्टी खा रहे हो, मुरब्बी। बड़ी देर कर देते हो।

मुरब्बी—आजकल तो रोज यही रोना है, भाई। बियाह न जाने किस-किसके होंगे, पर मुसीबत मुझे उठानी पड़ रही है।

मुनव्वर (हँसकर)—आप मुरब्बी जो ठहरे।

(मुरब्बी कुछ नहीं बोलते। कुछ देर वहां मौन रहता है। फिर मुरब्बी कहते हैं)

मुरब्बी--तैं कैसे आया रात को ?

मुनव्वर—कैसे क्या, सुना है, छोट्टे लाला नालिश करने जा रहे हैं।

सुना है, छोट लाला नालिश करने जा रहे हैं...

मुरब्बी—सुना तो है।

मुनव्वर—इस फसल रुक जाते, तो...

मुरब्बी—तूने कहा उससे ?

मुनव्वर—मैंने तो नहीं कहा। मेरे कहने से वह मानेंगे नहीं।

मुरब्बी—तो...

मुनव्वर—तुम नहीं कहोगे ?

मुरब्बी—मैं कहूं ? नहीं, मैं कुछ नहीं जानता। मैं किसीके झगड़े में नहीं पड़ता।

(मुनव्वर चौंककर देखता है। बोलता नहीं। मुरब्बी ही बोलते हैं)

मुरब्बी—लेकिन तू रुपये दे क्यों नहीं देता ?

मुनव्वर—होते तो क्या मैं नहीं देता ?

मुरब्बी—तो मैं क्या करूं ? मंगल, पानी ला भाई और ये बरतन हटा।

मुनव्वर—तो मैं जाऊं ?

मुरब्बी (पानी पीते-पीते)—देख; कहीं से हो सके तो किसी तरह कुछ रुपये दे जा। बात टल जायगी, अच्छा।

मुनव्वर—मुरब्बी...

(आगे कुछ नहीं कह पाता। कुछ देर खड़ा रहता है। फिर सिर झुकाकर चला जाता है! मुरब्बी हाथ धोने में लगे हैं।)

मुरब्बी—मंगल, पानी डाल। तू किधे देखे है ? मुनव्वर गया तो जाने दे। दिन-भर हाथ धोने की फुर्सत नहीं मिलती। कितने गंदे हो जाते हैं। और आज तो आंख भी कड़वा रही है। घर-जाकर बड़ी बहू से सुरमा ले आना, समझा।

मंगल—ले आऊंगा। आज ही लाऊं क्या ?

मुरब्बी—और क्या, कल लायगा ? आंख तो आज कड़वा रही हैं। तम लोगों से कुछ भी नहीं होता। जरा-

जरा-सा काम भी कहकर करवाना पड़े है। बैठ यहीं। मैं खुद जाता हूं।

मंगल—जी, मैं अभी जाता हूं।

मुरब्बी—नहीं, नहीं, तू बैठ। मैं जा रहा हूं। मुझे कुछ और काम भी है। देवी है कि गया ?

मंगल—जी, वह तो चला गया। अभी गया है।

मुरब्बी—सब साले भाग जाते हैं। किसीका काम में जी ही ना लगे। ला, मेरी लकड़ी कहां है ?

मंगल (लकड़ी उठाकर)—जी, यह रही।

मुरब्बी—मैं जा रहा हूं। बिछौना बिछा देना और जो बचा-खुचा सामान पड़ा है, उसे भीतर रख देना, समझा। खाली मत बैठना।

मंगल—बहुत अच्छा।

मुरब्बी—और खाट के पास पानी रख देना। थैला तकिए के पास रख देना। राम थारा भला करे, अबे मुनक्का ले आया था।

मंगल—जी।

मुरब्बी—और चूरन ?

मंगल—जी।

मुरब्बी—सब-कुछ रख देना, अच्छा। मैं अभी आता हूं।

मंगल—बहुत अच्छा।

(मुरब्बी जाते हैं। परदा गिरता है)

दृश्य २

(वही समय।[1] मंच पर दूकान का बाहरी रूप हटा दिया जाता है। एक मकान का आंगन है। इधर-उधर दरवाजे हैं जो अंदर जाते हैं। एक दरवाजे पर देवी की मां प्रभा खड़ी सूत अटेर रही है। पैंतीस के लगभग उमर है। देखने में सुंदर और खुशदिल है। तभी देवी आता है।)

प्रभा—कौन देवी, आ गया तू !

देवी—हां, भाभी !

प्रभा—तेरे लाला नहीं आये ?

देवी—अभी तो मंदिर से नहीं लौटे।

प्रभा—तेरे बाबा ने खाना खा लिया ?

देवी—हां, खा रहे थे। पर भाभी, मुझे तो ऐसा लगे कि आज बाबा की तबीयत कुछ खराब है।

प्रभा—क्यों, क्या बात है ?

देवी—कुछ ऐसे ही कर रहे थे। बहुत देर तक आप-ही-आप बोलते रहे।

प्रभा (हँसकर)—अरे वह तो उनकी आदत है।

---

१. रात दिखाने के लिए मंच पर उस जगह को छोड़कर, जहां पात्र खड़े हैं, बाकी जगह अंधेरा रहे, कहीं-कहीं दीवा या लालटेन जले।

घंटों बोलते रहे हैं !

देवी—नहीं भाभी, आज तो उनकी आंखों में पानी आ गया था।

प्रभा—सच !

देवी—हां ।

प्रभा—किसीसे कहन-सुनन हो गई थी क्या ?

देवी—पता नहीं। बार-बार मुनव्वर की बात करें थे। शायद चाचा के उसपर कुछ रुपये चाहिए।

प्रभा—तो बस तेरा चाचा ही आया होगा।

देवी—आये तो थे।

प्रभा—आया था तो उसीने कुछ कहा होगा। मैं जानूं हूं, उसकी आदत बड़ी खराब है। हमेशा कोई-न-कोई कड़वी बात कहदे है।

देवी—पर भाभी, आज तो चाचा तेज नहीं थे।

प्रभा—अरे बेट्टा, तेरे इस चाचा को मैं जानूं हूं। विष की गांठ है। उसका काटा पानी नहीं मांगे। अच्छा, कल कुछ बात हो, तो मुझे बताना। नालिश-वालिश की बात होगी।

देवी—अच्छा ।

(तभी मुरब्बी की लकड़ी की आवाज उठती है। पुकारते हैं।)

मुरब्बी (दूर से आता स्वर)—बेट्टी, ओ बेट्टी।

(दोनों चौंकते हैं)

देवी—मां, बाबा आये हैं।

प्रभा—तेरे बाबा?

देवी—हां सुन तो, तुझे पुकार रहे हैं।

मुरब्बी—बेट्टी, ओ बेट्टी...

प्रभा (जाते-जाते)—तब जरूर कोई बात है। बिना बात तेरे बाबा कब घर आते हैं? जब से तेरी दाद्दी मरी है, मैंने तो उन्हें तीज-त्यौहार के दिन या बीमार होने पर ही घर आते देखा है। (झांककर) जी। आ जाओ।

(मुरब्बी मंच पर आते हैं। देवी अंदर जाता है)

मुरब्बी—बड़ी देर हो गई। सब सो गए क्या?

प्रभा—जी हां, सब सो गए। देवी अभी आया है। कुछ काम है, बुलाऊं?

मुरब्बी—नहीं, उससे कुछ काम नहीं है।

प्रभा—तो?

(एक पल चुप रहते हैं। फिर बोलते हैं)

मुरब्बी—तो क्या बेट्टी। जरा मेरी गुल्लक देखना।

प्रभा—क्यों...

मुरब्बी—हां, कितने रुपये हैं।

प्रभा—वह तो मैं जानू हूं! यही पचासेक होंगे।

मुरब्बी—बस, कुल पचासेक हैं?

प्रभा—और कितने होत्ते ? अभी परसों तो आपने सौ रुपयें मंगवाये थे। बढ़े कहां से ? हाथ खुल्ला रखने पर भी क्या रुपये जुड़ें हैं ?

(मुरब्बी हँसता है।)

मुरब्बी (हँसते-हँसते)—राम तुम्हारा भला करे बेट्टी, वह बात है कि हाथ खुला रहने पर रुपया जुड़े नहीं। बंद रखो, तो जर लग जावे है।

प्रभा—लेकिन इस बखत आप रुपयों का क्या करेंगे ?

मुरब्बी (एकदम शांत)—बेट्टी क्या बताऊं, वह राधे जो है...

प्रभा (एकदम)—राधें रुपयों का क्या करेगा ?

मुरब्बी—राधे क्या करेगा, बात यह है कि मुनव्वर ने उससे तीनसौ रुपये उधार लिये थे। बेचारा गरीब किसान है, नहीं चुका पाया। वैसे उसे लेने नहीं चाहिए थे। लिये थे, तो चुकाने चाहिए थे। पर फसल खराब होगई, लौटा नहीं सका। राधे अब उसकी नालिश करने को कहता है।

प्रभा—इसमें क्या है। आप राधे को रोक दीजिये!

मुरब्बी—रोक तो देता, पर उसने न माना तो ? राम तेरा भला करे, बेट्टी। वही बात है कि नादान की दोस्ती जी का जंजाल। सोचचू हूं, मैं क्यों झगड़े में

पड़ूं, पर वह भी तो बखत-बे-बखत हाथ बांधे हाजिर रहे है। किसी काम से इन्कार नहीं करे।

प्रभा—जीहां, पारसाल उसने कितना न्यार भेजा था और गाय कितनी अच्छी खरीदवा दी है।

मुरब्बी—हां, बेट्टी! पांच सेर दूध तो उसके नीचे अब है।

प्रभा—अजी, खिलाई अच्छी होगी, तो आठ-दस सेर ले लेना। और है कितनी असील। चाहे बच्चा दुह ले।

मुरब्बी—बेट्टी, क्या बताऊं। जब मैं फेरी लगाता था तो यही एक आदमी था, जिसने मेरी मदद की थी। बहुत दिन तक इसकी झोंपड़ी में दुकान लगाई है। राम थारा भला करे, बेट्टी। वह बात है। खैर, अब किससे क्या कहूं—जिसके पैर न फटे बिवाई, वह क्या जाने पीर पराई।

प्रभा—आपको अब कितने रुपये चाहिए?

मुरब्बी—अभी तो सौ से काम चल सकता है। मैं बताऊं, बेट्टी! तेरी सास के बक्स में गुलूबंद पड़ा होगा वह तो ले आ।

(प्रभा एकदम कांप उठती है।)

प्रभा—गुलूबंद! वह तो भाभीजी का है। उसे आप क्या करेंगे?

मुरब्बी—और क्या करता ? रुपयों का इंतजार करूंगा ।

(फिर मौन)

मुरब्बी—क्या सोचने लगी, बेट्टी ? मुझे अभी जाना है ।

प्रभा—मैं अभी आती हूं । आप ठहरिये ।

मुरब्बी—हां-हां, मैं बैठा हूं, तू गुलूबंद ले आ। राम थारा भला करे, बेट्टी ! किसीसे कहने की जरूरत नहीं है । समझ गई न ।

प्रभा—जी, समझ गई ।

(प्रभा अंदर जाती है । मुरब्बी वहीं बैठ जाते हैं)

मुरब्बी (अपने-आपसे)—और करूं क्या ? कल तक उसे कम-से-कम सौ रुपये चाहिये ही । राधे तो मानेगा नहीं । नालिश करके रहेगा और नालिश करने पर उसे जेल जाना पड़ेगा...

(प्रभा लौटती है । मुरब्बी उठते हैं)

मुरब्बी—ला बेटी ।

प्रभा—जी, यह लीजिये, सौ रुपये हैं । चालिस आपके हैं, साठ मेरे । आपकी गुल्लक में जब साठ हो जायंगे, तो मैं रख लूंगी ।

(मुरब्बी एकाएक अनबूझ से देखते हैं । प्रभा रुकती नहीं । एकदम भीतर चली जाती है ।)

मुरब्बी (एकदम गहरा करुण स्वर)——बेट्टी...बेट्टी

यह लीजिये, सौ रुपये हैं...

...गई ! (फिर संभलकर) आखिर है तो मुरब्बी के घर की बहू। बेटा नालायक निकल गया तो क्या...

(सहसा राधे आता है। दोनों चौंकते हैं)

राधे——चच्चा ! तम यहां कैसे आये ? जी तो ठीक है ?

मुरब्बी——जी को क्या हुआ। तुझे ढूंढता फिरूं था। ले संभाल, बुढ़ापे में इस मुनव्वर ने जान आफत में डाल दी।

राधे——दिक्खे समझा नहीं। बात क्या है ?

मुरब्बी——अब तुझे समझाना भी पड़ेगा। तू

नालिश करने जा रहा था न उसपर। सो सौ रुपये दे गया है। बहुतेरा कहा मुझे बीच में न फांस। पर रट थी-तुम्हीं दे देना, तुम्हीं दे देना। सो भाई, गिन लेना। किसी साले का इतबार नहीं। मैं तो चला। मैं किसीके बीच में नहीं।

(एकदम बाहर निकल जाते हैं। राधे भौंचक कभी रुपयों को देखता है, कभी मुरब्बी के जाने की दिशा को। परदा गिर जाता है)

हुआ सवेरा

पात्र

रामकाका : किसान

रामकली : रामकाका की बेटी

छीटू : गांव के नाते रामकाका का भाई

नक्की महाराज : गांव का एक झगड़ालू आदमी
असली नाम पं० रामसेवक

बुधई : गांव के दलितवर्ग का एक व्यक्ति

मन्नीलाल : रामकाका का सगा छोटा भाई

बिहारीबाबू : ग्राम-सेवक

पहला दृश्य

(एक साधारण किसान की चौपाल। बीमार रामकाका चारपाई पर पड़े हैं। रामकली झुककर उनका बुख़ार देख रही है। तभी दरवाज़े पर दस्तक होती है)

छीटू—(खटखटाते हुए) रामकाका, ओ राम-काका !

रामकाका---अरी, देख रामकली, छीटू आया है।

रामकली---कहे देती हूं कि काका सो रहे हैं, नहीं तो बातें करके तुम्हारी तबीयत और भी खराब कर देंगे।

रामकाका---अरे, नहीं-नहीं, अंदर ले आना।

छीटू---(फिर से) रामकाका, ओ रामकाका, घर में हो?

रामकली---(अंदर से) आई, छीटू चाचा।

(दरवाजा खोलती है)

छीटू---(जल्दी में) रामकली बिटिया, रामकाका हैं?

रामकली---(धीरे से) हां हैं।

छीटू---क्या कर रहे हैं?

रामकली---सो रहे हैं।

छीटू---अरे, इतना दिन चढ़ आया, अभी सो ही रहे हैं!

रामकली---(फुसफुसाकर) चु...चु...चुप। धीरे बोलो, छीटू चाचा। बप्पा को बुखार चढ़ा है। जाग जायंगे।

रामकाका---(बीमार आवाज़ में) कौन? छीटू?

आ जाने दे, बिटिया। आओ भइया छीटू, अंदर निकल आओ।

छीटू---हां-हां, लाओ देखूं तो बात क्या है?

(अंदर आते हैं)

छीटू---अरे रामकाका, यह क्या! क्या हो गया है तुम्हें? मुझे तो खबर भी नहीं हुई। कब से बीमार हो? बच्चू तो कहता था कि कल तुम्हें खेत पर देखा था।

रामकाका---हां भैया, चारपाई पर तो आज ही पड़ा हूं! (बोलते-बोलते सांस फूलने लगती है, खांसते हैं), पड़ूं तो कैसे! इतना काम जो पड़ा है, आखिर कौन करेगा!

छीटू---मगर जान देने से क्या फ़ायदा?

रामकाका---अरे भैया, आंखों के सामने कोई कबतक देख सकता है! मन्नी की पतोहू रोज़ रात को खेत में से गेहूं काट ले जाती है और अपने बैलों को खिलाती है, सारा गांव जानता है। दो-एक दफा मना किया तो कहते हैं, कहीं के जानवर आकर चर गए होंगे! अब बताओ छीटूभैया, न रखाऊं तो चैत में एक दाना भी हाथ में आयेगा? (खांसते हैं) और कौन

सहारा है? (जोर से खांसी आती है। रुक-रुककर बोलते हैं) मन्नी और मैं एक कोख के हैं। उसकी पतोहू मेरी भी तो पतोहू लगती है। कुछ कहते भी तो नहीं बनता, भैया!

छोटू—यह तो बड़े अंधेर की बात है, काका। बिटियां-बहुरियां चोरी करेंगी तो बड़ों-बड़ों का क्या

"तुम्हारी जगह मैं होऊं तो कुछ कर बैठूं"

हाल होगा! काका, तुम तो सह लेते हो! तुम्हारी जगह मैं होऊं तो कुछ कर बैठूं!

रामकाका—भैया, सहूं न तो क्या करूं। पेड़ तो एक ही है। एक डाल को बचाने के लिए दूसरी को

कैसे काट डालूं ? मन को समझा लेता हूं। (खांसता है) छोटूभैया, बूढ़ा हो गया हूं, पौरुष थक गया है, नहीं तो परवा क्या थी ! जैसे रात भर यहां पड़ा रहता हूं, वैसे ही खेत पर पड़ा रहता। मगर माह-पूस का कट-कटज्वा जाड़ा, तिसपर आंख लगाने का भी सुभीता नहीं !

छोटू—काका, मड़ैया छवा दी जाय, कुछ ओढ़ना-बिछौना कहो तो मैं ही पहुंचा दिया करूं। कुछ पुवाल बचा है। मड़ैया में डलवा दूं ? घर सूना हो जायगा, नहीं तो मैं ही रह जाया करता !

रामकाका—नहीं भैया, तुम लोगों की दया से सब भगवान की किरपा है। मगर करूं क्या, एक खेत यहां है तो दूसरा वहां। चार बिसवा नहर के उस पार भी है। बप्पा जितना छोड़कर मरे थे, मन्नी ने अड़कर उसमें, हर खेत में, हिस्सा डलवा लिया। अब जहां-जहां उसके खेत हैं, वहां-वहां मेरे भी हैं। उसके पास आदमियों की कमी नहीं है, सब खेत रखाते हैं, और रखाने के बहाने पुरानी दुश्मनी निकालते हैं। (खांसते-खांसते थक जाते हैं) रात में कम-से-कम दो दफा तो नहर पार जाना ही पड़ता है।

छोटू—तो काका, कहें तो एकाध के हाथ-पैर

तोड़ दूं, सब ठीक हो जायगा उसी दिन से। हां, औरत पर हाथ नहीं उठाऊंगा, मगर एक दिन की चौकसी हमेशा के लिए झगड़ा खतम कर देगी।

रामकाका—झगड़ा करने से भी कहीं झगड़ा खतम होता है, छोटूभैया। फौजदारी, दावा नीलामी इसीमें तो हम गांववाले तबाह हुए हैं। रामकली की अम्मा के सारे गहने कचहरी खा गई। इसी सोच में तो वह मर गई बिचारी। (जोर से खांसी) अरे रामकली, ओ बिटिया, अपने छोटू चाचा को सुपारी नहीं खिलावेगी!

छोटू—झगड़े निबटाने का फिर उपाय क्या है, काका? न लड़ें, न फौजदारी करें, न कचहरी-अदालत जायं तो ये झगड़े कैसे निपटें। कहने से कोई मानता है, काका!"

रामकाका—नया खून है, भैया! आज के लड़के समझते नहीं कि ये लड़ाई-झगड़े कितने जानलेवा होते हैं। छोड़ो यह सब। और हालचाल सुनाओ, कोई नई खबर है?

छोटू—हां-हां, काका! मैं नई खबर ही लाया था। एक बिहारी बाबू गांव में आये हैं।

रामकाका—हां, सुना तो मैंने भी है।

छोटू—और भी कुछ सुना?

रामकाका——नहीं, और कुछ नहीं, मगर सब लोग उनके सुभाव की बहुत बड़ाई कर रहे थे। भैया, अच्छा आदमी मिल जाय तो पूरब जनम का पुण्य समझो। (खांसी उठती है)

छोटू——बड़ी-बड़ी बातें सुनी हैं, काका! मुझसे मिले भी थे। तुमसे भी जरूर मिलेंगे। कहते थे, गांव की सफाई करवायेंगे, दवा-दारू का इंतजाम करवायेंगे। गलियारा-लीकें साफ-पक्की करवायेंगे, कोपरेटिव खोलेंगे और काका सुना, कहते थे, यह सब गांववालों की मदद से करेंगे।

रामकाका——(जैसे दमे का मरीज कहता है) हूं-ऊं-ऊं!

छोटू——मगर काका, मैंने तो उनसे कह दिया——भैया, इन तिलों से तेल नहीं निकलेगा। इतनी सुबुद्धि हो तो गांववाले तर न जायं! कहते थे, सरकार ने गांवों की तरक्की का काम शुरू कर दिया है। सरकार की तरफ से वे आये हैं। मगर मुझे तो कुछ दाल में काला दिखाई पड़ता है।

रामकाका——नहीं, भैया! संदेह नहीं करना चाहिए। संदेह करना अपनी ही कमजोरी है। विश्वास करके देखो। उससे फायदा ही होता है। भैया, क्या

गांवों के भाग कभी नहीं जागेंगे ? कभी तो (खांसी) कभी तो (जोर से खांसी) ।

छोटू—हां, यही सब सोचकर मैंने भी उनका साथ देने की हामी भर ली है, मगर नक्की महाराज वगैरा तो अभी से अगड़म-बगड़म बकने लगे हैं।

रामकाका—कौन नक्की महराज ? वही पंडित रामसेवक ?

छोटू—हां, तुम उन्हें समझते क्या हो, काका! बड़ी शैतान की खोपड़ी है वह ।

रामकाका—हूं-ऊं ।

(रामकली चुपचाप आकर खड़ी हो जाती है)

छोटू—लाओ बिटिया, क्यों तमाखू है ? बोलती क्यों नहीं ?

रामकाका—क्या है री बिटिया, बोलती काहे नहीं ?

रामकली—(रुआंसी होकर) बोलती तो हूं, बप्पा !

रामकाका—अरे, तू रो रही है ! क्या बात है बिटिया ?

रामकली—बप्पा, मन्नी चाचा तुम्हें चोरी लगाते हैं। कहते हैं, तुम रात-रातभर वहां जागकर उनके

गेहूं काट लाते हो। कह रहे थे...

रामकाका--(दुखी होकर) देख रहे हो छीटू, तुम इस मनिया को ! बेईमान कहीं का! मैं कहता हूं, भगवान सबकुछ देखता है। मैं बूढ़ा हुआ, मेहनत-मजूरी से अबतक कट गई। जो बची है, जैसे-तैसे काट लूंगा। तुम्हीं सोचो, मैं चोरी क्यों करूंगा, भैया। मुझे चोरी लगाता है ! बाल-बच्चेदार होकर भी इसे भगवान् का डर नहीं है। (जोर से खांसी आती है)

(दृश्य परिवर्तन)

दूसरा दृश्य

(गांव की गली। आगे-आगे नक्की महाराज, नंगे बदन पर जनेऊ, बड़ी भारी चुटिया, हाथ में एक सोंटा। पीछे शोर मचाते हुए लड़के)

लड़के--कहां गंए नक्कीं महरांज
दौंड़ों उनकों पकड़ों आंज
अंरे अंरे नक्की महरांज

(कुछ लड़के चिल्लाते हैं--"आये", "आये")

नक्की महाराज--क्यां शोंर मचां रखां हैं ? भांगों यहां से।

लड़के--हें-हें-हें !

नक्की महाराज—भांगो, नहीं तों मारं पड़ेंगी, सीतांरांम, सीतांरांम ! देखां है यह डंडां।

लड़के—(भागते हैं) हें-हें-हें !
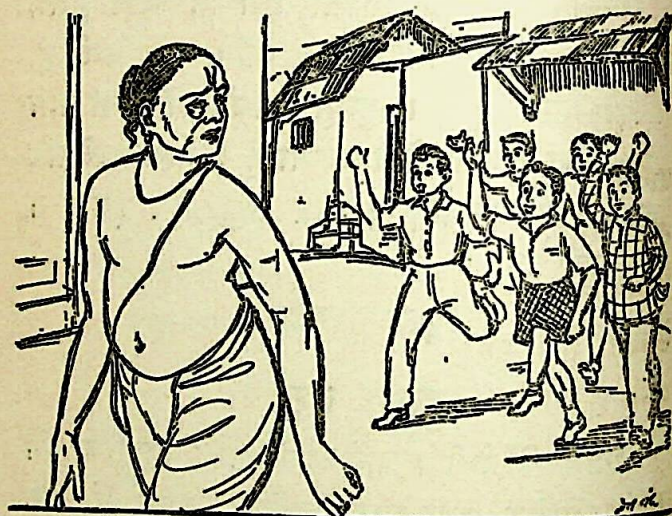
नक्की महाराज के पीछे शोर मचाते हुए बच्चे

नक्की महाराज—(बड़बड़ाते हुए) तंग आ गया मैं तों इन लड़कों सें; जैसें कोइं कांम ही नहीं रहं गया इन्हें।

छोटू—(दूर से) अरे रामसेवक महराज हैं! पांय लागी पंडितजी।

नक्की महाराज—भंगवान भलां करें, कहों छोटू किधर चंल दियें ?

छोटू—क्या बताऊं महराज, रामकाका के यहां से आ रहा हूं। मन्नीलाल ने तो उनका जिंदा रहना मुश्किल कर दिया है।

नक्की महाराज—अच्छां, कोंई नई बांत ? जरां समझां के बताओं, भैया।

छोटू—बात यह है कि रामकाका ठहरे सीधे आदमी। मन्नीलाल ने दावा करके उनको तबाह कर डाला, मगर अब भी उन्हें चैन नहीं, यहांतक कि रातोंरात उनकी हरी खेती चरवा लेते हैं या कटवा ले जाते हैं। कहां की भलमनसी है यह। गांव में रहना है तो सुमति से रहना पड़ेगा।

नक्की महाराज—अंरे भांई, जिसकां खेंत न तांका जांयगा, उंसीको जानवर चंर डांलेंगें, इंसमें कौन नई बांत हैं ? न मन्नी के जांनवर तो और किसीकें सही। कहीं बंच संकता है ?

छोटू—रखवाली पर भी तो बचाव नहीं है, महराज। रामकाका ने दो दिन रखवाली की तो मन्नीलाल ने उड़ा दिया कि रामकाका खुद उनके खेत से चारा काट लाते हैं। रामकाका-जैसे गऊ आदमी के लिए ऐसी बात ! राम-राम !

नक्की महाराज—जिसका नुकसांन होंगा वह

जरूर कहूंगा, इसमें गऊ आदमी और बछिया आदमी से क्या होगा।

छोटू---देखो नक्की महराज, तुम्हें आज से नहीं, लड़कपन से जानता हूं। लड़ाई करवाना तुम्हारा पेशा है, इसीकी कमाई खाते हो। आजकल मन्नीलाल के यहां लगे रहते हो, इसीसे तुम्हें आगाह किये देता हूं। रामकाका ने रोक न लिया होता तो अब-तक मन्नीलाल की अकल ठिकाने लगा दी होती! और तुम अपनी शैतानी नहीं छोड़ोगे तो तुम्हारी भी खबर ली जायगी। समझे।

(जाता है, दूसरी ओर से बुधई आता है)

नक्की महाराज---(अपने-आप) पीटेंगे बच्चू, अभी पंडित रामसेवक से पाला नहीं पड़ा है। बड़ा आया वहां से रौब जमानेवाला! . . .

बुधई---पांय लागी, महराज।

नक्की महाराज---कौन बुधई! कहां से आ रहे हो ?

बुधई---खेत पर से आ रहा हूं, महराज।

नक्की महाराज---किसके खेत पर से ?

बुधई---मालिक के खेत पर से और किसके!

नक्की महाराज---एँ सुंना तो थां कि तुम्हांरी अपनी जमीन भीं हों गई हैं।

बुधई---मेरा क्या है महराज, जो कुछ है भगवान का है, वही तो मालिक है।

नक्की महाराज---हूं तो मींठी-मींठी बातें करना बहुंत आं गयां है। कहो कि अंपने खेंत पर सें आं रहे हो। जां कहां रहें हों ?

बुधई---मालिक ने बुलाया है।

नक्की महाराज---किसने, मन्नीलांल ने ?

बुधई---जीहां, आप भी चलेंगे ?

नक्की महाराज---जां-जां, मुझें यही कांम थोंड़ा हैं ! तूं जां।

बुधई---अच्छा महराज, मैं तो चलूं, जै सीता राम !

(जाता है)

नक्की महाराज---(मुंह बनाकर) जैं सींताराम, हुंह, उंधर ग्रामसेवक के कहें पर चलना, इंधर मन्नीलांल की बैठक भी दांबना। चलो पंडित राम-सेवक, नहीं तों यें ग्रामसेंवकजी सब गड़बड़घोटाला कर डालेंगे।

(दृश्य परिवर्तन)

तीसरा दृश्य

(मन्नीलाल की चौपाल)

मन्नीलाल—और कहो बुधई, तुमने तो हमारे यहां का काम ही छोड़ दिया, अब तो अपनी जमीन पर खेती करते हो।

बुधई—ज़मीन मेरी क्या है, मालिक, आप ही लोगों की है, हम तो ताबेदार हैं, जब जैसी जरूरत हो, हाजिर हैं।

मन्नीलाल—हां-हां, इसीलिए तो तुम्हें बुलाया है। देखो, मैं तुमपर बहुत भरोसा करता हूं।

बुधई—मालिक, इसमें कहने की कौन बात है?

मन्नीलाल—अच्छा, रामदादा से मेरा जो मामला चलता रहा है उसे तो तुम जानते ही हो।

बुधई—हां, सरकार! सारा गांव जानता है।

मन्नीलाल—और तुम यह भी जानते हो कि नहर के उस पारवाले खेत में उनका भी आधा हिस्सा हो गया है।

बुधई—हां, सरकार।

मन्नीलाल—तो वह खेत तो पूरा-का-पूरा अपने हाथ में रहना ही चाहिए। एक बार की फ़सल न

सही। सुनो...तुम चुपके से नहर काट दो, नई मेंड़ है, गलकर बह जायगी, तब हम पूरे खेत को अपना बता देंगे...फिर होने दो फौजदारी, हम तो उसके लिए हमेशा तैयार हैं।

बुधई—सरकार !

मन्नीलाल—ऐं ! क्या तुम्हें कुछ हिचक है ? लगता है, तुम भी छोटू की बंदरघुड़की में आ गये। अरे, चोरी मैंने थोड़े ही लगाई थी। वह तो नक्की महराज ने अपने-आप उड़ा दिया। मैंने कहा, अब उड़ा ही दिया तो चलने दो, नहीं तो मैं तो कहने-वालों में नहीं, कर गुजरनेवालों में से हूं।

बुधई—मगर सरकार...

मन्नीलाल—अगर-मगर कुछ नहीं। रामदादा के खेतों से मिले हुए तुम्हारे खेत भी तो हैं।

बुधई—हां सरकार, बड़े सरकार ने नहर के दोनों ओर के खेतों की पट्टियां मुझे माफ़ी दी थीं।

मन्नीलाल—तभी तो कहता हूं, तुम भी हाथ-दो हाथ जितना चाहो बढ़ा लेना, सबके लिए एक साथ ही लड़ लिया जायगा। नहर पारवाले में तुम्हारा भी गेहूं है, मेरा भी गेहूं, रामदादा का भी गेहूं ... बस नहर काट दो, आधा तुम्हारा रहा (हँसकर) अरे

भाई, कुछ मुआविजा भी ले लेना, अब तो मुआविजा देने का रिवाज ही चल निकला है, हः, हः (हँसता है)।

बुधई—यह बात नहीं है, मालिक। छोटे मालिक से तबीयत बहुत घबराती है, आप तो उन्हें जानते ही हैं।

मन्नीलाल—कौन छिटवा ? हां-हां, उसका छोकड़ापन अभी तक नहीं गया, बंदर-घुड़कियां दिया करता है।

बुधई—मगर सरकार, इतनी मुश्किल से तो भाग जागे हैं, बिघाभर जमीन हाथ में आई है, कहीं अदालत में फंस गया तो वह भी निकल जायगी...।

मन्नीलाल—धत्तेरे की ! डरपोक कहीं का ! किसीने ठीक कहा है, कुत्ता नहलाने से बछड़ा नहीं बन जाता। अपनी जमीन होने पर भी ज़मींदार हो जाना सबके लिए मुश्किल है। जमीन तो लच्छिमी है, लच्छिमी। उसे तो बराबर बढ़ाते रहो तभी तक तुम्हारे पास रहेगी। हाथ पर हाथ धरकर बैठे नहीं कि बिस्वा-बिस्वा करके सारी गायब। खैर छोड़ो, यह बताओ नक्की महराज तो नहीं दिखाई पड़े ?

बुधई—रास्ते में मिले थे।

मन्नीलाल—और हां, तुमने अपनी जमीन गांव-

विकासवालों की खेती के लिए भी तो दी थी। कैसी खेती हो रही है उसपर, मैं तो उधर गया ही नहीं।

बुधई---अच्छी हुई है, मालिक (कुछ समझाने के ढंग से) लगती तो जोरदार है, वैसे कटने पर मालूम होगा।

मन्नीलाल---(ठंडी सांस लेकर) मुझसे भी कह रहे थे, मगर मैंने तो मना कर दिया। इसमें कुछ-न-कुछ पेंच तो होगा ही।
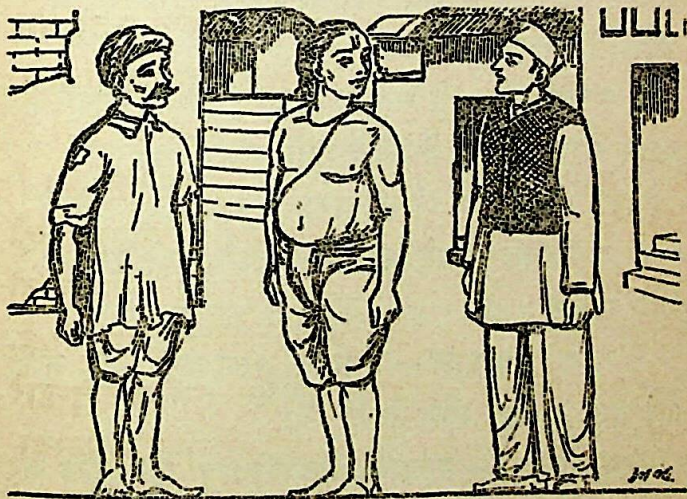
बुधई, नक्की और मन्नी

बुधई---पेंच की राम जाने! बिहारी बाबू हैं तो बड़े अच्छे और मिलनसार भी बहुत हैं।

मन्नीलाल—हां, सो तो हैं। दवा-दारू, नहर के पानी, कुओं की खुदाई, अच्छे बीजों का इंतजाम वगैरा तो सब ठीक है, मगर मैं कहता हूं कि भाई, यहींतक रहो, ज़मीन में हाथ न लगाओ। आगे की बात गड़बड़ है।

बुधई—नहीं मालिक, ज़मीन में हाथ वे नहीं लगायेंगे। बिहारीबाबू कहते थे कि वह तो रास्ता दिखाने भर के लिए हैं। अपने हाथ में कुछ न लेंगे। मेरी खेती को ही देखिए, जितनी ज्यादा फ़सल होगी सब मुझे ही तो मिलेगी।

मन्नीलाल—हो सकता है, तुम्हारी बात सही हो, मगर वह मेरे गले के नीचे नहीं उतरती।

(नक्की महाराज 'जै सीताराम' कहते हुए आते हैं)

मन्नीलाल—अरे आओ महाराज, बड़ी देर लगाई, पांय लागी।

नक्की महाराज—भंगवान भलां करें। हां, बुधई आं गए, अच्छां, बैठों-बैठों।

मन्नीलाल—महराज, बिहारीबाबू जो कुछ कर रहे हैं, उनके बारे में आपकी क्या राय है?

नक्की महाराज—अरे, वही गांवसेंवक (हँसकर) जबतक रामसेंवक बने हैं, तंबतंक भइया गांवसेंवक

की दाल नहीं गलने की, अरें सब जांल है, जांल। सुना नहीं तुमने, इनके बिहारीबाबू अंब चकबंदी करांने चले हैं, घंर-घंर लोगों को समझांते फिरते हैं कि अपनी जमीन फलाने को दें दों, फलाने कीं जमीन तुम लें लो, बड़ें-बड़ें खेत बनाओ. . .भला बतांओ, कोंई अपनी जमीन छोंड़ देंगा, मगर सुनां है, कुछ लोंग तैयार भी हो गये हैं।

मन्नीलाल—एँ! तो क्या उनका काम शुरू हो गया है?

नक्की महाराज—अरें, पंडित रामसेवक को किस बांत की खंबर नहीं रहतीं। यह जो बुधइंया मींठी-मींठी बांतें कर रहां है, सबसे पहले तों यही रांजी हुआ थां....पूछिए न।

मन्नीलाल—(डांटकर) क्यों बे!

(बुधई सहमता है, सहसा पर्दा गिरता है)

चौथा दृश्य

(पहले दृश्य जैसी व्यवस्था। चारपाई पर बीमार रामकाका। ग्रामसेवक बिहारीबाबू रामकाका से बातें कर रहे हैं। रामकली भी मौजूद है।)

बिहारी—मगर रामकाका, मैंने बुधई को पहले

ही राज़ी कर लिया है। नहर के इस पार की उसकी पट्टी जितनी है, आपका नहर के उस पारवाला खेत उससे ज्यादा ही है। मन्नीलालजी नहीं तैयार होते तो न सही। आप इसी बात को मान लें तो आपकी आधी हो जायगी।

रामकाका—बिहारीबाबू, तुम अभी नए-नए गांव में आये हो, पर मैं तुमको गांव का ही लड़का समझता हूं, तुम हमारे अच्छे के लिए कहोगे, मगर पुरखों की ज़मीन को मैं कैसे छोड़ दूं ?

बिहारी—रामकाका, तुम तो समझदार आदमी हो। पुरखों का ही तो सारा देश है, हम इसे ठीक से रखें, मिल-जुलकर रहें, तभी तो अपने पुरखों के लायक बनेंगे। धरती को अलग-अलग बांटकर सोचना भी क्या कोई अच्छी बात है। सोचो, जब इतने समझदार होते हुए तुम इस तरह झिझकोगे तो औरों का क्या हाल होगा।

रामकाका—हां बेटा, तुम्हारी बात समझ में तो आती है। अच्छा देखो, सोचूंगा, जो कुछ तुम कहोगे मुझे मंजूर होगा। (खांसी)

बिहारी—रामकाका, मेरी बात सब मानेंगे। जब सबके भले की बात है तो लोग क्यों इंकार करेंगे।

उन्हें मालूम होगा कि आप भी मेरे साथ हैं, तब तो मन्नीलालजी तक मान जायंगे। बस, आपका आशीर्वाद चाहिए।

रामकाका—मेरा आशीर्वाद ! अरे भैया, मैं तो पापी आदमी हूं, काया का बोझ ढो रहा हूं। तुम आशीर्वाद दो कि अब जल्दी चलाचली हो। (ज़ोर से खांसी आती है)।

बिहारी—बहन रामकली, देखो काका को दवाई समय पर ज़रूर पिला देना। इस दवा से वह ज़रूर अच्छे हो जायंगे और जब जैसी जरूरत हो मुझे कहला भेजना। कल सवेरे तो मैं खुद आऊंगा ही। अच्छा रामकाका, चलूं, देखूं कुछ और लोग राज़ी हो जायं तो और भी हिम्मत बंधे, राम-राम।

रामकाका—जाते हो बेटा ! राम-राम ! अरी रामकली, बिहारीबाबू को कुछ सुपारी, इलायची।

बिहारी—ठीक है रामकाका, फिर कभी सही। अभी तो चलूंगा। बहुत लोगों से मिलना है।

(जाता है)

रामकली—काका, बिहारीबाबू इतना काम करते हैं कि कोई हिसाब नहीं। इतनी-इतनी बातें सुननी पड़ती हैं उन्हें, मगर हिम्मत नहीं हारते।

रामकाका---बड़ा हिम्मतवाला लड़का है, बिटिया! भगवान् करे उसकी तपस्या पूरी हो। एं, यह शोर कैसा है!

(नेपथ्य से भीड़ के स्वर सुनाई पड़ते हैं)

एक स्वर---नहीं-नहीं, यह कैसे हो सकता है?

दूसरा स्वर---जाओ-जाओ, यह पट्टी किसी दूसरे को पढ़ाना।

नक्की महाराज का स्वर---धोंखा है, धोंखा, जांल है, जांल।

रामकली---वे ही सब बिहारीबाबू की राह में रोड़े अटकानेवाले लोग हैं।

रामकाका---आह बिटिया, बंद करदे दरवाज़ा, नहीं सुना जाता मुझसे यह सब। (रामकली दरवाज़ा बंद करती है, शोरगुल बंद हो जाता है।)

रामकाका---बत्ती बुझा दे, बिटिया। रात हो गई। अब सोऊंगा।

(रामकली बत्ती बुझाती है। मंच पर अंधियारा हो जाता है)

पांचवां दृश्य

(थोड़ी देर बाद धीरे-धीरे प्रकाश होता है, जैसे

सवेरा हो रहा हो। इसी बीच रामकाका की चौपाल-वाला दृश्य हट गया है। मंच खाली है । अचानक रोशनी फैलते ही एक ओर से कतार बांधकर गीत गानेवाले निकल आते हैं । गानेवालों में बिहारी सबसे आगे है।)

हो गया सबेरा अब तो
जाग जा रे भाई

बंजर और परती जागी
आंख खोल धरती जागी
फूल हो गई कलियां

महीं महाई,
जाग जा रे भाई

खरिकों पर गोरू जागे
पेड़ों पर पखेरू जागे
कूक उठी कोयलिया
धुनि पड़ी सुनाई
जाग जा रे भाई

जोत आसमानी जागी
भारत की बानी जागी
एक हो रही दुनिया
दे रही दिखाई
जाग जा रे भाई

छठा दृश्य

(गाना समाप्त होने पर मंच पर फिर से अंधेरा हो जाता है। उजाला होने पर वही रामकाका की चौपालवाला दृश्य सामने आता है। इस बीच दो महीने बीत गए हैं।)

बिहारी---सब आपका आशीर्वाद है, रामकाका। देखो, दो ही महीनों में गांवभर में कितनी सुमति हो गई है। लोग अपने पैरों पर खड़ा होना सीख गए हैं। चकबंदी करीब-करीब पूरी हो चुकी है। अगली फ़सल अब, भगवान की कसम, दूनी न हो तो कहना।

रामकाका---(अत्यंत रुग्ण स्वर में) तबतक जिया तो देखूंगा भैया। इस हाड़ों की ठठरी में अब क्या बचा है !

बिहारी---ऐसा न समझो, रामकाका, अब वे दिन गए जब लोग खांस-खांसकर बिस्तर पर मर जाते थे। मैं तुम्हें शहर ले चलूंगा और तुम्हारा इलाज कराऊंगा। मुंह-देखी बात नहीं कहता, काका, सचमुच तुम लाखों में एक हो। तुम्हें हम किन्हीं भी दामों बचा लेंगे।

रामकाका---बेटा, तुम उस जनम में मेरे कोई बड़े सगे-संबंधी रहे होगे। आदमी अपने के लिए भी इतना नहीं करता, जितना तुम मेरे लिए कर रहे हो। (खांसी)

बिहारी---कैसी बात करते हो, काका, मैं तो तुम्हारे लड़के की तरह हूं। यह तो मेरा कर्तव्य है। मैं तो सेवक हूं।

रामकाका—कौन कहता है तुम सेवक हो, तुम तो भैया, देवता हो। तुमने हमें नई समझ दी है। तुमसे इस गांववाले कभी उरिन नहीं होंगे, कभी नहीं।

बिहारी—यह तो हमारा काम ही है, काका। लोगों को अपने पैरों पर खड़े होने की सलाह देना, उनको उन्हीं के अंदर छिपी हुई ताकतों का पता देना, यही हमारा काम है। अच्छा काका, एक खबर दूं, तुम खुश हो जाओगे।

रामकाका—कहो, बेटा।

बिहारी—आज मन्नीलालजी भी हमारी योजना में शामिल हो गए हैं। वह अपने किये पर पछतावा कर रहे थे। आज आपसे माफ़ी मांगने आ रहे हैं।

रामकाका—कौन, मन्नी! अरे, वह मेरा छोटा भाई है। उसका कैसा कुसूर!

मन्नीलाल—(सहसा प्रवेश करके, भर्राए गले से) रामदादा, मैं नहीं जानता था कि तुम्हारा दिल इतना बड़ा है कि मुझे माफ़ कर दोगे।

रामकाका—भैया, आओ। धन्यवाद दो भगवान

को कि उसने बिहारीबाबू-जैसा हीरा लड़का हमारे गांव में भेज दिया।

नक्की महाराज---मैं तों पहलें हीं कहतां थां कि बिहांरीं बांबू बड़ें हीं अंच्छे आंदमी हैं।

(पर्दा गिरता है)

भगवान के प्यारे

: १ :

हरि को भजै सो हरि का होई

तेजाराम देवनगर आया है। यहां उसके मामा बदलू चौधरी रहते हैं। अच्छे खाते-पीते हैं। गांव की पंचायत में अच्छी धाक है। उनकी बैठक में कुछ छूत-अछूत की बात चल रही थी। तेजाराम ने मामा से पूछा, "क्यों मामा, बैठक में लोग क्या कह रहे थे ?"

बदलू चौधरी ने कहा, "नत्था मेहतर की बहू ने पीपलवाले कुंए पर चढ़कर पानी भर लिया है। उसी बारे में बातचीत चल रही थी। पंचायत करनी है। सुना है, अब तो कानून भी बन गया है कि कोई भी हरिजन अछूत नहीं माना जायगा।"

तेजाराम बोला, "हां मामा, आप ठीक कहते हैं। कानून तो बन गया है, लेकिन जबतक हमारे दिल नहीं बदलते तबतक कानून से कुछ नहीं बनता। शिक्षा भी होनी चाहिए। शिक्षा से ज्ञान का दरवाजा खुल जाता है, जो हमें सही रास्ता दिखलाता है। ये बातें भी आज पंचायत में रखनी चाहिए।"

चौपाल पर पंचायत हो रही थी। पं० रामभज, ठाकुर शेरसिंह, लाला धनीराम और बदलू चौधरी गांव के लोगों की बातें सुन रहे थे। बदलू चौधरी ने तेजाराम की ओर देखा और बोले, "अरे तेजा, तू भी तो कुछ कह रहा था। बतला वह कौन-सी बात थी ?"

तेजाराम ने कहा, "अब यह कानून बन गया है कि सेवा का काम करनेवालों को अछूत या छोटा न माना जाय। जो लोग सेवा करनेवालों से परहेज करेंगे वे सजा पायंगे। हर सेवक को हर पंचायती जगह पर जाने का पूरा अधिकार है, चाहे वह मंदिर हो या कुंआ। लेकिन यह कानून पूरी तरह तभी फायदा पहुंचा सकेगा जब हम सब सचाई को समझें, अपने धर्म को पहचानें। हमारे धर्मग्रंथों में बड़ी अच्छी-अच्छी बातें मिलती हैं। आपने सुना होगा, एक संत कवि ने कहा है—

जाति पांति पूछे नहिं कोई।
हरि को भजै सो हरि का होई॥

: २ :

रैदास

ठाकुर शेरसिंह ने कहा, "तुम्हें कोई कथा याद हो तो सुनाओ।"

तेजाराम बोला, "कथाएं बहुत-सी हैं। आप सब ने रैदास का नाम सुना होगा। ये काशी के रहनेवाले और जाति के चमार थे। मरे हुए पशुओं की खाल निकालकर जूते बनाना इनका काम था। अपनी इसी कमाई से परिवार को पालते और राम-भजन करते। सब लोग उनका आदर करते थे। मीराबाई ने तो उन्हें अपना गुरु बना लिया था। इनके भजन आज भी बड़े प्रेम से गाये जाते हैं।"

पं० रामभज बोले, "भैया, उनका कोई भजन याद हो तो सुना दो।"

तेजाराम ने सुनाया—

प्रभुजी तुम चंदन हम पानी।
जाकी अंग अंग बास समानी॥
प्रभुजी तुम घन बन हम मोरा।
जैसे चितवत चंद्र चकोरा॥
प्रभुजी तुम दीपक हम बाती।
जाकी ज्योति बरे दिन राती॥
प्रभुजी तुम मोती हम धागा।
जैसे सोनेहि मिलत सुहागा॥
प्रभुजी तुम स्वामी हम दासा॥
ऐसी भक्ति करे रैदासा।

सब लोगों ने बड़े प्रेम से भजन सुना। तेजाराम कहने लगा, "भगवान कृष्ण ने गीता में कहा है, "जो मुझको भजते हैं, मैं उनसे प्रेम करता हूं; ऊँच-नीच या छूत-अछूत का विचार भगवान के दरबार में नहीं है।"

: ३ :

नंदा नाई

बदलू चौधरी बोले, "भैया, सुनते हैं कृष्ण भगवान ने नंदा नाई का काम अपने हाथ से किया था।"

तेजाराम ने कहा, "हां मामा, आप ठीक कहते हैं। नंदा नाई राजा दुर्योधन का नौकर था। एक दिन भजन में ऐसा लीन हुआ कि उसे राजा के पास जाने की भी सुधि न रही। जब भजन समाप्त हुआ तो नौकरी का ध्यान आया। बिचारा डरते-डरते राजा के पास गया और पैर दबाने लगा। राजा बोला, "अरे, तुम तो अभी पैर दबाकर गए हो। अब दुबारा दबाने की दरकार नहीं है।"

राजा की बात सुनकर नंदा को बड़ा अचंभा हुआ। उसे ध्यान आया कि हो-न-हो, भगवान् ही मेरा रूप धरकर राजा के पैर दबाने आये होंगे। उसने ठीक ही सोचा। जब भगवान् ने देखा कि उनका भक्त उनके

ध्यान में मग्न है तो उसका काम स्वयं जाकर कर आये। प्रभु के चरणों का भक्त होने के कारण ही आज भी नंदा का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। किसीने ठीक कहा है—

प्यारे प्रभुजी के जो गुन गावें।
वे नर जग में पूज्य कहावें

जन की सेवा में रहें वे नर सदा महान।
ऊंच नीच का भेद तजि, पाओ तुम कल्यान ॥

हरि न देखते बरन को सदा देखते ध्यान।
जनम जाति अन्तर तजौ समझि लेहु यह ज्ञान ॥

: ४ :

रामदास मोची

तेजाराम की बातें सब बड़े ध्यान से सुन रहे थे। उसने कहा—"ऐसी एक नहीं, बहुत-सी कथाएं हैं। आप लोगों ने रामदास का नाम सुना होगा।"

बदलू चौधरी बोले—"रामदास चमार का ?"

"हां-हां।" फिर उसने आगे सुनाना शुरू किया—दक्षिण में गोदावरी नदी के किनारे कनकावती नाम की एक नगरी थी। वहीं रामदास रहता था। दिल का बड़ा साफ़ और सरल और न्याय की कमाई खाने-

वाला। हर समय भगवान का नाम उसके मुंह पर रहता था। उसकी स्त्री का नाम मूली था। दोनों जने जूते बनाते और उन्हें बाजार में बेचकर अपनी गुजर-बसर करते।

एक दिन की बात कि कुछ चोर गहनों के साथ कहीं से शालिग्राम की बटिया चुरा लाये। उन्होंने उसे बेकार का पत्थर समझकर रामदास को दे दिया। रामदास उस बटिया पर औज़ार घिसता, चमड़ा काटता, उसपर रखकर सिलाई करता और मन-ही-मन भगवान का गुण गाता रहता।

एक दिन एक ब्राह्मण रामदास से जूता खरीदने आया। उसने बटिया पहचानकर रामदास से मांग ली। घर ले जाकर उसने उसे गंगाजल से स्नान कराया और फिर धूप-दीप से भली-भांति पूजा की। पूजा तो वह रोज करता था, पर उसके दिल में बहुत-सी बुराइयां भरी हुई थीं। दूसरी तरफ रामदास पूजा नहीं करता था, किंतु उसका दिल साफ़ था। वह किसी का बुरा नहीं चाहता था। एक दिन भगवान ने ब्राह्मण से सपने में कहा—"तुम मुझे रामदास के घर पहुंचा दो। वहां मुझे बड़ा आनंद आता है।"

भगवान् के आदेश के अनुसार ब्राह्मण ने शालिग्राम

की बटिया रामदास को जाकर दे दी और सारी घटना कह सुनाई। जब रामदास को मालूम हुआ कि वह
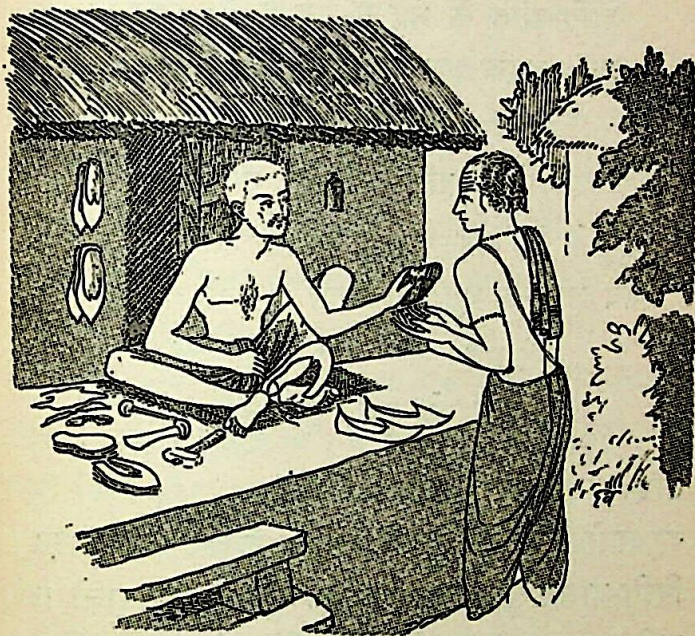
रामदास बटिया पंडितजी को देते हुए

भगवान की मूर्ति है तो उसने आसन पर बैठाकर शालिग्राम की पूजा की। उसके सच्चे प्यार के बस होकर भगवान ने उसे दर्शन दिये और कहा—"रामदास, कोई भी आदमी मेरा भक्त बन सकता है और सबका आदर पा सकता है।"

जो जन हरि का ध्यान लगावें।
वे ही सबके पूज्य कहावें ॥

जाति-पांति के भेद से मन के भेद अपार।
सब जन एक समान हैं, जहां प्रभु का दरबार ॥

अन्त्यज द्विज के भेद बनावें।
वे नर हरि को जान न पावें।

प्रभु के हम सब पुत्र हैं, जानि लेहु यह बात।
भेद भाव के भूत पर, क्यों न करो आघात ॥

छूतछात को जो अपनाएं।
वे हरि से मन दूर हटाएं ॥

साईं मन के भेद हटाओ।
पहचानों निज अंतर बातें, तनिक न अब भरमाओ।
निसि-वासर तुम कपट दम्भ में डूब-डूब उतराओ ॥
करो न ज्ञान ध्यान की बातें, कैसे श्रेष्ठ कहाओ।
बहुत किया अब तो हठ त्यागो, मन में प्रेम बसाओ।
लाखन जन अपने भ्राता हैं, उनको गले लगाओ ॥

: ५ :

कूबा कुम्हार

तेजाराम की बातों को सुनकर सबको बड़ा

आनंद आ रहा था। लाला धनीराम बोले—"भैया तेजा, तुम्हारी बातें तो ऐसी हैं कि सुनते-सुनते जी नहीं अघाता। और कोई कथा याद हो तो सुनाओ ?"

तेजाराम ने कहा—"राजपूताने के एक गांव में कूबा नाम के एक आदमी रहते थे। वे जाति के कुम्हार थे। उनकी स्त्री का नाम पुरी था। दोनों भगवान का भजन करते और बर्तन बनाते। बर्तनों से जो आमदनी होती, उसीसे काम चलाते। उन्हें अपना काम प्यारा था और प्यारा था भगवान का नाम।

एक बार गांव में बहुत-से साधू आये। वे भोजन के लिए आटा चाहते थे। गांव के लोगों ने उन्हें कुछ नहीं दिया और कूबा का घर दिखला दिया। बेचारे कूबा के घर अनाज का एक दाना भी नहीं था। फिर भी उन्होंने बड़ी खुशी से साधुओं का स्वागत किया। वे एक धनी के घर गए और आटा-दाल उधार मांगा। उस आदमी ने कहा, "मैं यह सामान इस शर्त पर दे सकता हूं कि तुम बदले में मेरे लिए एक कुआं खोद दोगे।" कूबा ने उनकी बात मान ली और आटा-दाल लाकर साधुओं को सौंप दिया।

दूसरे दिन से कूबा ने कुआं खोदना शुरू कर दिया। कूबा खोदते थे और पुरी ऊपर से मिट्टी खींच-

कर बाहर फेंकती थी। अचानक कुंआ नीचे धसक गया। कूबा उसी में दब गये। पुरी बाहर खड़ी-खड़ी रोने लगी। पर अब हो क्या सकता था? कूबा का जिन्दा निकलना कठिन था। लोगों ने उसे समझा-बुझाकर घर भेज दिया।

धीरे-धीरे एक साल बीत गया। लोग कूबा को भूलने लगे। एक दिन की बात कि कुछ साधू उसी कुएं के पास ठहरे। उन्होंने रात को हरिकीर्तन की ध्वनि सुनी। वे सब भी उसी आवाज में आवाज मिला-कर रात भर कीर्तन करते रहे। सवेरे यह खबर गांव में पहुंची। कुंए की खुदाई करवाई गई। राजा भी यह करामात देखने आया। मिट्टी निकालने पर लोगों ने देखा कि कूबा भगवान के ध्यान में मग्न है। उसके चारों ओर उजाला हो रहा था। कूबा को बाहर निकाला गया। राजा ने उसके चरण छुए। बाद में सबने उसकी चरणधूलि अपने माथे पर लगाई।

वह गगरी अति धन्य है, हर लेती जो प्यास।
खाली गगरी-सा मनुज जग को करे उदास॥

सांचा मेरा कर्म है, सांचा प्रभु का नाम।
सांचा ही सद्भाव है, सांचा हरि का धाम॥
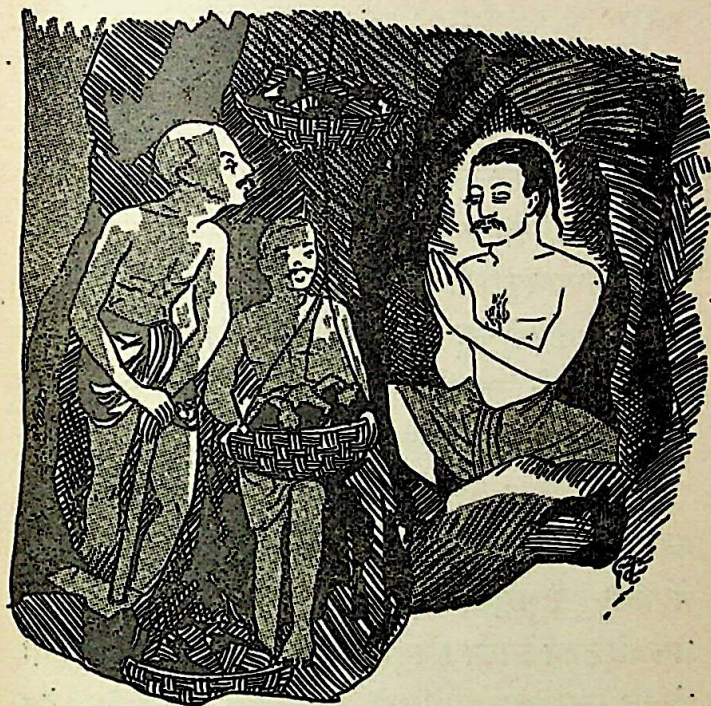
कूवा ध्यान में मग्न

जो सेवा के भाव से करते जन का काम ।
सब सज्जन उनको करें सहृदय सदा प्रणाम ।।
माटी के ये घट बने, सबके आते काम ।
भेद न मानव में करें, देते हैं आराम ।।

: ६ :

रघु धीवर

तेजाराम ने देखा कि लोग उठने का नाम नहीं ले रहे हैं तो उसने एक कथा और सुनानी शुरू की।

जगन्नाथपुरी से दस कोस दूर पिपलीचट्टी नाम का गांव है। इसमें रघु नाम का एक धीवर रहता था। वह नदी से मछली पकड़कर लाता और उनको बेचकर अपना पेट भरता।

रघु अपना काम तो करता, लेकिन उसका ध्यान बराबर भगवान के चरणों में लगा रहता। जब जाल में फंसी हुई मछली तड़पती तो उसे देखकर रघु का मन भी तड़प उठता। वह सोचता—हाय, मैं कैसा पापी हूं, जो इन बेकसूर प्राणियों को मारता हूं! लेकिन पेट के लिए और कोई धंधा भी तो नहीं था। मन मसोसकर उसे यह काम करना पड़ता था।

एक दिन की बात कि एक सुंदर-सी मछली उसके जाल में फंस गई। रघु ने जैसे ही उसे पकड़ा, मछली के मुंह से एक चीख निकली। रघु ने सुना, 'नारायण' शब्द उसके मुंह से निकला था। रघु प्रभु के प्रेम में मस्त होगया। उस मछली को उसने एक गहरे तालाब

में छोड़ दिया और हरिगुण-गान करने लगा। वहींपर उसे अपने प्यारे प्रभु के दर्शन हुए।

जब रघु गांव लौटा तो लोगों ने उसे बुरा-भला कहा—"घरवाले तो भूखों मर रहे हैं और तुम मौज उड़ा रहे हो।"
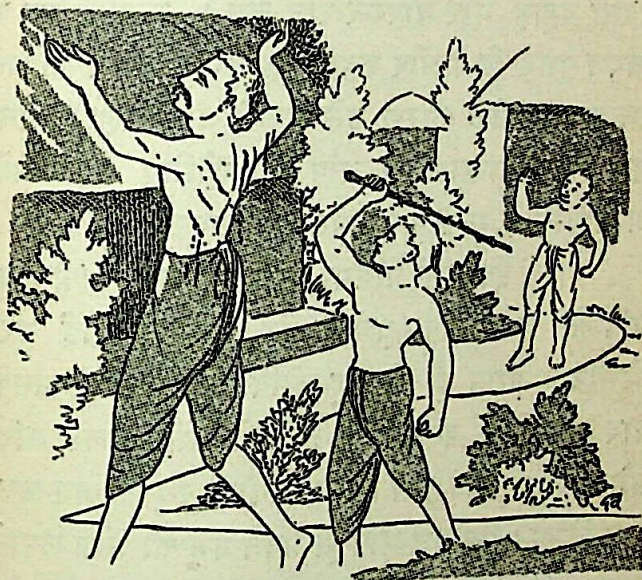
रघु प्रभु के प्रेम में मस्त

पर रघु पर इनका कोई असर न हुआ। वह वैसे ही हरि-कीर्तन में मस्त रहने लगा। गांव के शरारती लड़के उसे तंग करते, पर वह उनसे कुछ न कहता। एक दिन एक लड़के ने कंटीले डंडे से रघु को मारना

शुरू किया। उसके शरीर से खून बहने लगा, किंतु उसने कोई परवा न की। वह हरिनाम जपता रहा। दैवयोग से वह नटखट लड़का अपने-आप बेहोश होकर गिर पड़ा और मर गया।

सारे गांव में कुहराम मच गया। लड़के के माता-पिता दहाड़ मार-मारकर रोने लगे। उन्होंने रघु के चरण पकड़ लिये और कहा, "हमारे लड़के ने आपको सताया, उसीके कारण उसे अपनी जान से हाथ धोना पड़ा। दीन ब्राह्मण पर आप कृपा कीजिए। आपके आशीर्वाद से मुझे पुत्र वापस मिल सकता है।"

रघु ने ईश्वर से प्रार्थना करते हुए कहा—"हे प्रभु, यदि मेरे हृदय में ब्राह्मण के बेटे के विरुद्ध कोई बुरा विचार न आया हो तो यह जीवित हो जाय।" उसके बाद वह कीर्तन करने लगा। देखते-देखते बालक आंखें खोलकर उठ खड़ा हुआ। सब लोगों ने रघु का जय-जयकार किया। अब रघु आप ही अपने प्रभु को भोग लगाने लगा।

एक दिन जगन्नाथपुरी में भोग लगाया जा रहा था कि अचानक भगवान् की मूर्ति दिखलाई न पड़ी। राजा को बड़ा दुख हुआ। वह प्रार्थना करने लगा। तब भगवान ने कहा, "मेरा भक्त रघु केवट पिपली-

चट्टी गांव में है। मैं उसके हाथ से भोग पा रहा हूं।

राजा उस गांव में पहुंचा और रघु को उसके घरवालों के साथ जगन्नाथ पुरी ले आया। आखिरी समय तक रघु की लौ भगवान में लगी रही।

रघु केवट का भोजन खाया।
प्रभु ने जग को प्रेम दिखाया॥

मीन मारि परिवार को पालनु करें सप्रेम।
धनि-धनि रघु केवट तुम्हीं हरि गुन गायं सनेम॥

मछरी मुख ते हों सुनों, 'नारायन' को नांउ।
तुम सब प्रानिनु में बसो, ओरु रहो सब ठांउ॥

नहिं भूलौ तुम जग में भाई।
सबते सुखद भक्ति अधिकाई॥

जाके उर प्रभु पद हैं प्यारे।
वे ही जन हैं मान्य विचारे॥

जीवन के छै लक्ष्य गनि, समता कौ करि ध्यान।
प्रभु पद में रखि प्रीति तौ, पावैगौ कल्यान॥

एक रक्त और मांसु है, एक अस्थि अरु चाम।
हरि के गेह न भेद सुनु, राखे अनगिन नाम॥

नारायन की दया सुहानी।
तारौ मूढ़ अधम अज्ञानी॥

नाम प्रताप एक संसारा।
बना शिरोमणि प्रेम उचारा॥

धीवर पै कीन्हीं दया, सुखद दियो वरदान।
नारायन की दीठि में छोटौ नहीं महान॥

नत्था जमादार की बहू की बात हवा में उड़ गई। सब लोग कथाएं सुनने में लगे थे। तेजाराम ने कहा—"काफी देर हो गई है। कल आपको और कहानियां सुनावेंगे।"

: ७ :

मणिदास माली

अगले दिन फिर सब चौपाल पर इकट्ठे हुए तो तेजाराम ने कहानी शुरू की—जगन्नाथपुरी में मणिदास नाम का माली रहता था। वह फूल-हार बेचकर अपना पेट भरता था। प्रभु के चरणों में उसका बहुत ही प्रेम था। वह मंदिर में जाकर कीर्तन करता और उसमें इतना लीन हो जाता कि नाचने लगता।

एक दिन मंदिर में कथा हो रही थी। मणिदास भी मौजूद था। वह अपनेको न रोक सका और हरि-गान करता हुआ गाने लगा। नाचते-नाचते वह कथा-वाचक

पंडित की ओर बढ़ गया। इसपर पंडित को क्रोध आगया कि यह नीच मुझ जैसे की बराबरी कर रहा है और मेरे आसन तक आगया है। उन्होंने बुरा-भला कहा। सुननेवालों ने थप्पड़ मारकर उसे निकाल बाहर किया। मणिदास दुःखी होकर चला गया। उससे खाना भी नहीं खाया गया। उसी रात को राजा से सपने में भगवान ने कहा—"मेरे भक्त के साथ बड़ा अन्याय हुआ है और वह भूखा-प्यासा बाहर पड़ा हुआ है। उसे मेरे मंदिर में आने दो और आज से कथा लक्ष्मी-मंदिर में हो। मेरा मंदिर भक्तों के लिए छोड़ दिया जाय। वे यहाँ खूब आनंद से गावें-नाचें।

राजा तुरंत मणिदास के पास गया और चरण छूकर उससे क्षमा मांगी। मणिदास फिर मंदिर में आया और अपनी भक्ति से प्रभु को आनंदित करने लगा।

हौं माली परि गुन गहौं, रामनाम कौ सार।
कटि जावें भवफंद हूं, होवे नौका पार।

फूल फूल हौं चुन लियौ, कंटक दीने त्याग।
गंध करनु में बसि रहीं, रे मनुआ तू जाग॥

वे द्विज कछु नहिं काम के, जिन हरि प्रेम न होय।
कागद के ज्यों फूल में, गंध न पावे कोय॥

हरि कीरति जिसने मन गाई।
उसने ऊंची स्रेनी पाई ।।

वही श्रेष्ठ औ वही महान।
जिसमें हरि का जागा ज्ञान ।।

सब जीवनु में प्रभु कौ रूप।
जाने नहीं गिरे भव कूप ।।

सब पुहुपनु में वाकी गंध।
खोल हृदय को मति बन अंध ।।

अपनेको तू श्रेष्ठ बखानै।
अधम और कौं मन में मानै ।।

कैसे पावै तू सुख सार।
अपने मन कौं नैंकु सुधार ।।

चुनि सुमन सुगंध सुभे गूंथे मोहक हार।
लाखन जन आनन्द लें जिन उर हरि कौ प्यार ।।

: ८ :

परमेष्ठी दर्जी

सुननेवालों की भूख बराबर बढ़ती जा रही थी। तेजाराम ने कहा—अजी, कहांतक सुनाऊं ! सैंकड़ों हजारों कहानियां हैं। लो, एक और सुनो—

आज से सौ साल पहले दिल्ली में परमेष्ठी नाम का दर्जी रहता था। वह कपड़े सीता था और भगवान का नाम लेता था। कभी-कभी भक्ति में ऐसा लीन हो जाता कि उसकी आंखों से आंसू बहने लगते, हाथ रुक जाते, सुई-धागा एक ओर हो जाते और वह भगवान कृष्ण के ध्यान में खो जाता।

परमेष्ठी अपने काम में बहुत होशियार था। एक बार बादशाह ने हीरे-मोती से जड़ा हुआ एक कपड़ा परमेष्ठी को दो तकिए बनाने के लिए दिया। दर्जी ने बड़ी मेहनत से तकिये तैयार किये। उन्हें देख दर्जी का मन कुछ उदास होगया। उसने सोचा इतने सुंदर तकिये तो भगवान के योग्य हैं। वह ध्यान में मग्न होगया। इतने में भगवान् जगन्नाथ ने परमेष्ठी के हाथ से एक तकिया स्वीकार कर लिया। परमेष्ठी को बड़ा आनंद हुआ।

वह एक तकिया लेकर बादशाह के सामने पहुंचा। बादशाह ने तकिया बहुत पसंद किया और दूसरे तकिए के बारे में पूछ-ताछ की। परमेष्ठी ने कहा—"मैंने उसे भगवान के अर्पण कर दिया है।" इस बात पर बादशाह बहुत गुस्सा हुआ और परमेष्ठी को जेल में डलवा दिया।

रात को बादशाह ने सपना देखा कि देवता ने उसे मारा है और परमेष्ठी को जेल से छोड़ने का आदेश दिया है।

बादशाह ने सबेरा होते ही यह बात अपने वजीरों को सुनाई और बताया कि मेरी देह इस समय भी दुःख रही है। फिर बादशाह नंगे पैर जेलखाने पहुंचा और परमेष्ठी की बेड़ियां खुलवाकर पैर पकड़ लिये

परमेष्ठी की बेड़ियां खुलवादीं

और क्षमा मांगी। इसके बाद बहुत-सा धन देकर आदर से उसे विदा किया।

बादशाह हो या धनिक या बलवीर महान।
बिना प्रेम नर तुच्छ है, जो न करे हरिगान॥
हरि की आज्ञा है यही, राजा रंक समान।
नाम नाव में सब तरें, यही एक है ज्ञान॥

: ९ :

कबीर जुलाहा

तेजाराम ने कहा—"कबीर की कहानी तो आप लोगों ने सुनी ही होगी।"

पं० रामभज बोले—"सुनी तो है। लेकिन तुम फिर सुनादो। अच्छी बातें जितनी भी बार सुनी जायं, फायदा ही होता है। है न?"

तेजाराम ने कहा—तो सुनिये। बनारस में लहरतारा नामक एक तालाब था। उसके पास नीरू जुलाहे को एक बालक पड़ा हुआ मिला। नीरू ने उसे अपने लड़के की तरह पाला। उसका नाम रखा कबीर।

कबीर बड़ा होने पर पिता के काम में हाथ बंटाने लगा। वह कपड़ा बुनता और बाजार में बेच आता। कई बार ऐसा होता कि वह कपड़ों को साधु-संतों को यों ही दे आता। बचपन से ही उसका मन

भगवान की ओर खिचने लगा। वह चाहता था कि गुरु रामानुजाचार्य का सहारा उसे मिल जाय, किंतु नीच होने के कारण ऐसा कैसे हो ? एक दिन रात को कबीर गंगाजी गये और उसके घाट की सीढ़ियों पर लेट गए। वहां रामानुजाचार्य से उनकी भेंट हुई। कबीर का प्रेम देखकर रामानुजाचार्य ने इन्हें दीक्षा दे दी।

कबीर ने बताया कि जाति-पांति और ऊंच-नीच की भावना बुरी है। उन्होंने ढोंग और पाखण्ड की निंदा की। हिंदू हो या मुसलमान, उन्होंने दोनों की बुराइयों को सामने रखा है। वे सबकी अच्छाइयों को मानते थे। "प्रभु के प्रेम के सामने दुनिया की कोई कीमत नहीं है।"--वे इस बात को मानते थे। उन्होंने लोगों को सच्चा रास्ता दिखाया--ऐसा रास्ता जिस पर चलकर आदमी अपना और सबका भला कर सकता है।

हिंदू कहें राम मोहि प्यारा, तुरक कहें रहिमाना।
आपस में दोऊ लड़िलड़ि मूए, मरम न काहू जाना॥

सांच बराबर तप नहीं झूठ बराबर पाप।
जाके हिरदय सांच है ताके हिरदय आप॥

घूंघट के पट खोल रे तोहे पीव मिलेंगे।
घट-घट रमता राम रमैया, कटुक बचन मत बोल रे।
रंगहमल में दीप बरत है आसन से मत डोल रे।
कहत कबीर सुनो भाई साधो अनहद बाजत ढोल रे।

आए हैं सो जायंगे राजा रंक फकीर।
एक सिंहासन चढ़ि चले, एक बंधे जात जंजीर ॥
चिड़ी चोंच भर ले गई नदी न घटियो नीर।
दान दिए धन ना घटे कह गए दास कबीर ॥
साधु भए तो क्या भए, बोले नहीं विचार।
हने पराई आतमा, लिए जीभ तरवार ॥
दुर्बल को न सताइये, वाकी मोटी हाय।
बिना जीव के सांस सों लोह भसम हो जाय ॥
जो तोको कांटा बुवे ताहि बोइ तू फूल।
तोकों फूल के फूल हैं बाको हैं तिरशूल ॥

: १० :

अबूबेन अदम

तेजाराम ने कहा—लीजिए एक कहानी और सुन लीजिए, फिर खतम। यह कहानी अंग्रेजी की एक किताब में आती है।

एक आदमी था। उसका नाम था अबूबेन अदम। एक दिन उसने देखा कि एक देवदूत उसके कमरे में आया है। अंधेरी रात थी। फिर भी वह कमरा उजाले से जगमगा उठा। देवदूत के हाथ में एक किताब थी, जिसमें वह कुछ लिख रहा था।

अबूबेन अदम ने पूछा—"कहिए, आप क्या लिख रहे हैं ?"

देवदूत ने उत्तर दिया—"मैं उन आदमियों का नाम लिख रहा हूं, जो भगवान को प्यार करते हैं।"

अबूबेन अदम ने सोचा—मैंने तो कभी पूजा-पाठ किया नहीं। फिर भी वह बोला—"मेरा नाम उन लोगों में लिख लीजिए, जो इंसान की सेवा करते हैं, उससे प्रेम करते हैं।"

देवदूत ने उसका नाम लिख लिया और चला गया।

दूसरे दिन रात को वह फिर आया। उसने एक कागज दिखाया, जिसमें उन आदमियों के नाम लिखे हुए थे, जिनको भगवान प्यार करते हैं। अबूबेन अदम का नाम सबसे ऊपर था।

इससे मालूम होता है कि भगवान उसी को प्रेम करते हैं, जो इंसान को प्रेम करता है, आदमी आदमी

के बीच भेद नहीं करता और सबके सुख-दुःख में काम आता है।

पं० रामभज बोले, "गांधीजी ने भी तो हमें यही रास्ता दिखाया था और अब विनोबाजी भी वही कह रहे हैं।"

तेजाराम ने कहा "आपकी बात सही है। दुनिया में जितने महापुरुष हुए हैं, उन्होंने हमेशा सबकी भलाई की बातें कही हैं और की हैं। उनसे एक ही सीख मिलती है और वह यह कि हम भी ऐसे काम करें, जिनसे सबका भला हो।"

●
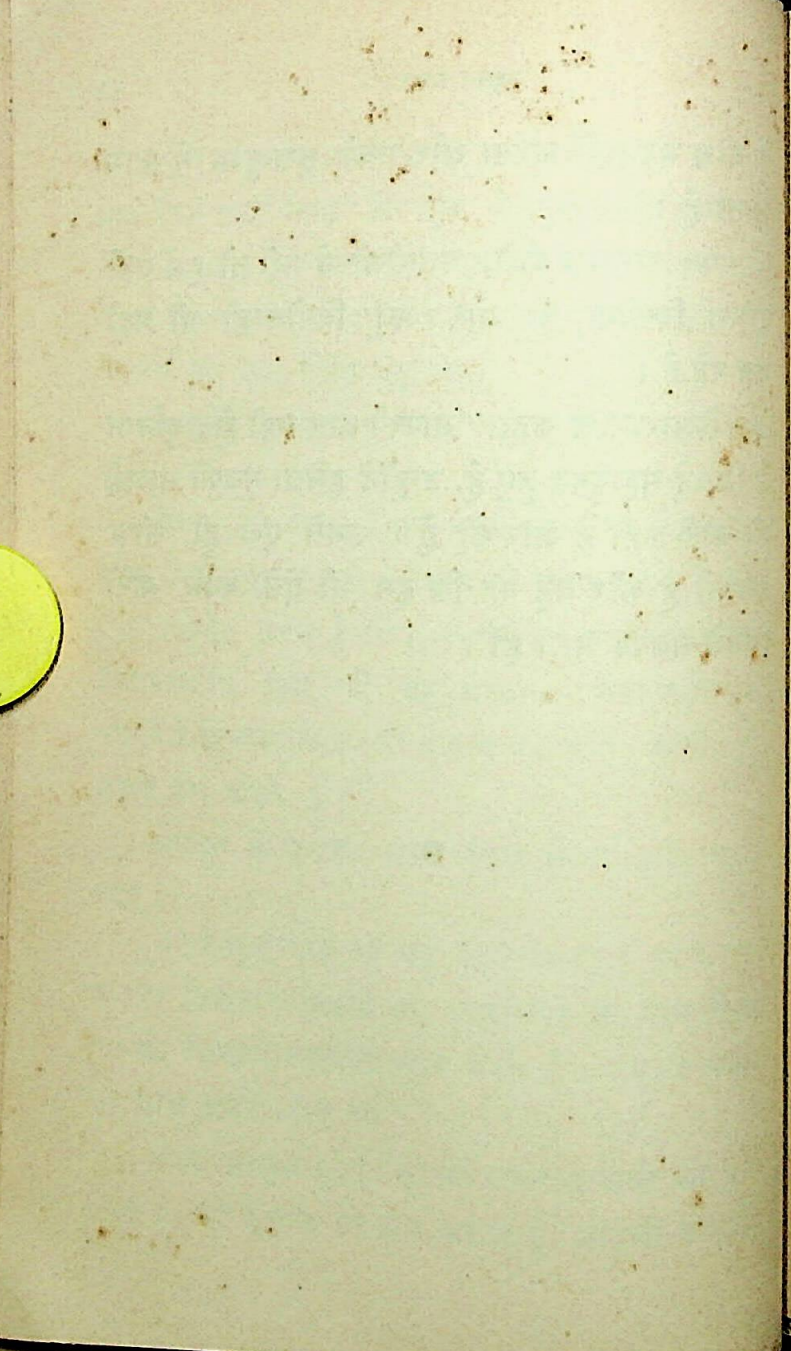
विनोबा के पावन प्रसंग

"बाबा, हम बहुत दुःखी हैं। हमारी मदद कीजिये।"

"कहिये, क्या चाहते हैं!"

"बच्चों की गुजर-परवरिश का कुछ सिलसिला लगना चाहिए।"

"तो क्या किया जाय?"

"हम लोग अनपढ़ हैं, हरिजन हैं। खेती के सिवा दूसरा काम जानते नहीं। उसीका कुछ ठिकाना लगवा दें तो बड़ी दया हो।"

"खेती-किसानी के लिए क्या चाहते हैं?"

"थोड़ी जमीन हमें मिल जाय।"

"कितनी?"

"कोई अस्सी एकड़ इस गांव के सब हरिजनों के लिए काफ़ी होगी।"

"अस्सी एकड़ से काम चल जायगा?"

"हां, बाबा।"

थोड़ी देर बाद गांव के छोटे-बड़े, गरीब-अमीर सबको बाबा ने बुलाया। कहा—"यहां के हरिजनों को अस्सी एकड़ जमीन चाहिए। क्या आप लोग दे सकते हैं?"

"एक भाई खड़े हो गये, "हां, बाबा ! मैं अपने पिता की याद में सौ एकड़ जमीन देने को तैयार हूं।"

"खुशी से देते हैं ?"

"जीहां, बहुत खुशी से। मैं इसका कागज भी लिखकर दे दूंगा।"

कमाल होगया ! ऐसा न कभी देखा था न सुना था। दान-धर्म के रूप में मन्दिर-मस्जिद के लिए जमीन दी जाती है। स्कूल-कालेज के लिए दी जाती है। धर्मशाला के लिए दी जाती है। लेकिन खेती करने के लिए और हरिजनों के लिए जमीन, यह पहली बार दी गई।

बाबा ने मन में सोचा—अगर प्रेम से यह काम एक गांव में हो सकता ह तो हिन्दुस्तान के सब गांवों में भी हो सकता है। इसी श्रद्धा के साथ वह निकल पड़े। वह १८ अप्रैल, १९५१ का दिन था। तबसे वह लगातार पैदल घूम रहे हैं। गांव-गांव जाकर वह प्रेम की बात कहते हैं, प्रेम से हर जगह समझाते हैं—अपने आपस के मामले आपस के सवाल, हमें राजी-खुशी से, मेल-समझौते से, प्रेम से आप ी तय कर लेने चाहिएं।

इन बाबा का नाम है विनोबा। उनकी कुछ बातें आगे पढ़िये।

... ...

विनोबा पर उनकी माता रुक्मिणीबाई का बड़ा भारी असर पड़ा है। वह अपनी मां की पहली संतान

हैं। उनके दो छोटे भाई हैं।

विनोबा की मां बड़ी धर्म-परायण थीं। वह इनसे कहा करती थीं, "विन्या, जो देता है वह देव है। जो रखता है वह राक्षस।"

घर में कोई नई चीज पकातीं तो पहले मुहल्ले के लोगों के घर विन्या के हाथ भिजवा देतीं। उसके बाद जो बचता, सो घर के काम आता। कभी-कभी ऐसा भी होता कि चीज बचती ही नहीं। सारी-की-सारी बंट जाती। पर मां को उससे खुशी ही होती। इस तरह बांटकर खाने की आदत मां ने अपने बेटे में बचपन से ही डाल दी।

... ...

विनोबा के घर के लोग और नाते-रिश्तेदार उस दिन की राह देखते थे जब विनोबा की शादी होगी और यह घर-गिरस्ती चलायेंगे। इनकी माता कहतीं, "विन्या, उत्तम गृहस्थ का जीवन बिताने पर पितृ-ऋण चुक जाता है; लेकिन उत्तम ब्रह्मचर्य के पालन से चालीस पीढ़ियां तर जाती हैं।"

इससे विनोबा को ब्रह्मचर्य की प्रेरणा मिली। उन्होंने विवाह नहीं किया। वह बाल-ब्रह्मचारी हैं। इस समय उनकी उम्र तिरेसठ साल की है।

... ...

दसवां दर्जा पास करके विनोबा इन्टर में पढ़ने लगे।

इम्तहान देने बम्बई जाना था। लेकिन रास्ते में सूरत स्टेशन पर उतर पड़े और पढ़ाई छोड़ देने का फैसला किया। काशी की तरफ निकल गये। किसीने पूछा, "कहां जाते हो?" इन्होंने कहा "काशी।" उसने पूछा, "वहां क्या करोगे?" बोले, "वेद-उपनिषद पढ़ेंगे। ब्रह्म की खोज में हूं।"

काशी पहुंचे। वहां एक बड़ा भंडारा चलता था। विनोबा दोपहर को वहीं खाते। लेकिन इतनी भीड़ होती थी कि खाना परोसने में एक घंटा लग जाता था। इस एक घंटे में विनोबा गीता का पाठ करते। इस तरह पूरी गीता इन्हें याद हो गई।

खाने के बाद दो पैसे दक्षिणा के मिलते। उससे उनका शाम का काम चल जाता। एक पैसे की आध सेर शकरकन्द लेते और एक पैसे का पावभर दही। उसीसे पेट भर जाता और मौज से संस्कृत पढ़ते थे।

... ...

इनकी माता को संतों के भजन बहुत याद थे। वह काम करते-करते अक्सर भजन गाती रहतीं और विनोबा को भी सुनातीं। विनोबा को भी वे भजन याद हो जाते थे। दोनों में धर्म की खूब चर्चा होती। कभी-कभी तो माता उसमें इतनी लीन हो जातीं कि दाल और साग में नमक तक डालना भूल जातीं। विनोबा बड़े प्रेम से खाना खा लेते, लेकिन छोटा भाई शिकायत

करता—"मां, आज दाल में नमक नहीं डाला है ?" इसपर विनोबा कहते, "अरे, तुझे भोजन से मतलब

"नमक न रहने से तेरी साधना में कौन कमी आगई ?"

है या नमक से ? नमक न रहने से तेरी साधना में कौन कमी आ गई ।"

... ...

विनोबा की मां अपनी रसोई बनाकर पड़ोस के हारी-बीमारी के घर में जाकर मदद करतीं, रसोई बना आतीं । विनोबा ने एक दिन उनसे कहा, "मां, यह तो स्वार्थ है कि पहले अपनी रसोई पका लेती हो, फिर बाद में दूसरों की रसोई करती हो ।"

मां ने जवाब दिया, "अरे, विन्या ! यह स्वार्थ नहीं

है। अपने घर तो जल्दी उठकर बना लेती हूं। दूसरे के घर इतने तड़के जाऊंगी तो उनको असुविधा होगी। फिर जल्दी रसोई बना आऊंगी तो लोगों को ठंडा खाना मिलेगा।"

... ...

घर पर कोई भी मांगनेवाला आता, विनोबा की माताजी उसे चुटकी भर आटा या कुछ-न-कुछ जरूर दे देतीं। एक दिन विनोबा ने कहा, "मां, धर्म की किताबों में लिखा है कि दान सुपात्र, कुपात्र देखकर देना चाहिए। कुपात्र को कभी न दे, सुपात्र को दे।"

माता ने जवाब दिया, "विन्या, मैं तो जो आता है, उसे नारायण समझकर देती हूं। मैं यह फैसला करनेवाली कौन हूं कि जो आया है वह पात्र है या अपात्र है या कुपात्र ! मैं तो कृष्णार्पण करती हूं।"

... ...

विनोबा अपनी माता को गीता के श्लोक अक्सर सुनाया करते थे। गीता की बातें करते रहते थे। माता ने कहा, "तू 'गीता-गीता' की रट लगाता रहता है। लेकिन संस्कृत के श्लोक मेरी समझ में नहीं आते। क्या मराठी में कोई गीता नहीं है, रे ?"

गीता का एक मराठी का अनुवाद विनोबाजी ने माता को लाकर दिया। लेकिन वह भी कठिन था और ठीक-ठीक समझ में नहीं आता था। तब विनोबा ने गीता के

बीस-पच्चीस श्लोक छांटकर माताजी को दिये।

एक दिन माताजी बोलीं, "विन्या, तू तो गीता जानता है। तब इसका मराठी में अनुवाद क्यों नहीं कर देता ?"

यह बात विनोबा के दिल में बैठ गई और पंद्रह साल बाद, १९३० में उन्होंने 'गीताई' नाम से गीता का मराठी में अनुवाद किया। आज 'गीताई' महाराष्ट्र में घर-घर चलती है।

... ...

एक दिन मां रोटी सेक रही थीं। विनोबा चूल्हे के पास जा बैठे। उनके हाथ में गोल किये हुए कुछ कागज थे। विनोबा ने उसका एक सिरा आग में दिखाया। कागज जलने लगा।

मां ने पूछा, "विन्या, क्या कर रहा है ?"

जवाब मिला, "मां, कुछ नहीं ! स्कूल के अपने सार्टिफिकेट हैं। इन्हें अग्नि देवता की भेंट कर रहा हूं।"

"अरे, तेरे पास पड़े रहते तो क्या हर्ज था ?"

"मां, जब इनसे काम नहीं लेना, तो इन्हें अपने पास रखना ही क्यों ?"

विनोबा ने बहुत-सी कविताएं लिखी थीं। वे सब उन्होंने काशी में गंगा-किनारे बैठकर गंगाजी को भेंट कर दीं।

बड़े होने पर जब विनोबा देश में घूमे तो इन्हें

जगह-जगह मान-पत्र मिले। एक पूरी पेटी भर गई। वे सारे मान-पत्र एक दिन गोदावरी में बहा दिये।

... ...

काशी से विनोबा सीधे महात्मा गांधी के पास चले आये। साबरमती-आश्रम में रहने लगे। कुछ दिन बाद विनोबा ने एक साल की छुट्टी ली। महाराष्ट्र में जाकर संस्कृत पढ़ी और धार्मिक ग्रन्थों का मनन किया। ठीक एक साल बाद वह लौट आये। वही तारीख, वही समय। बापू को तो ध्यान भी नहीं रहा था। विनोबा को देखकर वह बहुत खुश और चकित हुए। इसकी याद करते हुए एक दिन बापू ने विनोबा से कहा—"उस घटना से तुम्हारी सत्य-निष्ठा का पता चलता था।"

विनोबा ने झट उत्तर दिया, "नहीं, वह तो गणित में निष्ठा का प्रमाण था।"

कहने की जरूरत नहीं कि विनोबा को गणित बहुत प्रिय है।

... ...

बापू को मालूम हुआ कि विनोबा अपने माता-पिता को खबर दिये बिना आश्रम में आगये हैं। उन्होंने उनके पिताजी को पत्र भेजा :

"आपका, चिरंजीव विनोबा मेरे साथ है। इतनी कम उमर में उसने जो वैराग्य और भगवत्-निष्ठा प्राप्त कर ली है, उसे हासिल करने में मुझे तो कई

बरस लगातार मेहनत करनी पड़ी थी।"

विनोबा का नाम विनायक नरहरि भावे था। बापू ने 'विनोबा' कर दिया। तबसे वह इसी नाम से जाने जाते हैं।

सन् १९१८ में देश-भर में महामारी बहुत जोर से फैली। विनोबा के माता-पिता और भाई (चौथा) भी बीमार पड़े। उनकी बीमारी का समाचार पाकर बापू ने विनोबा को उनके पास भेज दिया। भाई चल बसा। पिताजी अच्छे होगये। तीन दिन बाद माताजी का भी बिछोह होगया।

विनोबा ने कहा कि माताजी का दाह-संस्कार मैं करूंगा और वेद-पाठ करूंगा, पंडितों की जरूरत नहीं। पिताजी नहीं माने और बोले, "कुल की रीति का पालन करना होगा।"

लेकिन विनोबा अडिग रहे। पिताजी भी अटल रहे। आखिर उन्होंने कुल की रीति के अनुसार सब क्रिया-कर्म किये। विनोबा उसमें शामिल नहीं हुए। घर पर ही गीता तथा वेद का पाठ करते रहे और फिर आश्रम लौट आये। पाठकों को पता होगा कि विनोबा अपनी मां को बहुत चाहते थे।

... ...

गरमी के दिन थे। आम का मौसम था। फल अभी पके नहीं थे। एक दिन जोर की आंधी आई। कच्चे

आम सैकड़ों-हजारों की तादाद में झड़ गये। गरीबों का बेहद नुकसान होगया। जो आम फूट गये वे तो बेकार होगये; जो साबित बचे, उन्हें टोकरों में भरकर बेचने निकल पड़े।

एक किसान अपनी टोकरी लेकर आश्रम आया। कोई राहगीर मिल गया। पूछा, "क्या दाम हैं इसके?"

"भैया! वैसे तो हर साल टोकरी तीन रुपये में जाती थी। आप जो दे दें।"

"तीन रुपये? होश में भी है कि नहीं? अभी

"होश में भी है कि नहीं?"

बाजार से चला आ रहा हूं। सैकड़ों टोकरी आई हुई हैं। रुपये-रुपये को कोई नहीं पूछता।"

"बहुत नुक़सान हुआ है। आप जो ठीक समझें दे दें।"

"देना हो तो एक रुपये में दे।"

"कुछ और बढ़ा दें। बड़ा घाटा पड़ा है।"

गाहक ने सवा रुपया दिया और टोकरी खाली करा ली।

किसान घर जाने लगा। सामने विनोबा की झोंपड़ी पड़ी। विनोबा ने पूछा, "सब आम बिक गये दीखते हैं?"

उसने कहा, "क्या कहूँ, सवा रुपया मिला।"

"सवा रुपया! वैसे दाम कितने होने चाहिए थे?"

"हर दफे तो तीन रुपये टोकरी जाती थी, लेकिन आंधी के कारण सारे आम झड़ गये और भाव गिर गया।"

"लेकिन तुमने इतने सस्ते दिये ही क्यों?"

"तो फिर क्या करता? न देता तो टोकरी वापस ढोनी पड़ती। जितना पाया, उतना ही सही।"

विनोबा ने उसके तीन रुपये पूरे कर दिये और आश्रम के एक साथी से कहा, "तुम्हारा क्या खयाल है? जब यह किसान संकट में है तो इसके दुःख में हाथ बंटाने की बात सूझनी चाहिए, या लूटने की?"

"दुःख बंटाना चाहिए।"

"लेकिन आज के पूंजीवादी समाज में ऐसी लूट हर दिन चलती है। हमें इसका भान तक नहीं रहा है।

इसी कारण से देश में दुःख है, गरीबी है, असन्तोष है।"

... ...

बारह बरस वर्धा-आश्रम में रहकर, विनोबा नालवाड़ी (महिला-आश्रम से एक मील पर) आ गये। वर्धा जिले के देहात में काम शुरू किया। महीने में पांच दिन आश्रम में रहते, पच्चीस दिन देहात में। 'ग्राम-सेवा-मंडल' नाम की नई संस्था खोली, जो अब भी चलती है।

यहां उन्होंने तकली पर सूत कातने का अभ्यास किया। एक प्रयोग यह करने लगे कि कताई से जितनी मजदूरी होगी, उतने का ही खायेंगे। दिनभर में आठ घंटे मेहनत करने पर साढ़े तीन आने की कमाई होती। उसीमें विनोबा गुजर करते। नतीजा यह हुआ कि वह दुबले होते चले गये और वजन ११५ से घटकर ९५ पौण्ड रह गया।

जब यह बात बापू को मालूम हुई तो उन्होंने कहा, "अब तुम्हारी चिन्ता मुझे करनी पड़ेगी।"

बापू सोचने लगे कि तन्दुरुस्ती ठीक करने के लिए विनोबा को किसी पहाड़ी जगह पर भेजा जाय। कई सुझाव मित्रों ने दिये—शिमला, मसूरी, महाबलेश्वर आदि-आदि। बापू ने विनोबा से कहा, "जहां तुम्हारी इच्छा हो, वहां चले जाओ।"

"बापू, मैंने अपने लिए स्थान खोज लिया है।"

विनोबा ने जवाब दिया।

"कहां ?"

"यहीं, पवनार गांव में (वर्धा से चार मील दूर) नदी के उस पार टेकड़ी पर जो मकान है, वहीं रहूंगा।"

"जैसी इच्छा।"

विनोबा वहां जाकर रहने लगे। उसे परमधाम-आश्रम नाम दिया। वहां तीन महीने के अन्दर उनका वजन पैंतीस पौंड बढ़ गया।

... ...

सन् १९३९ में दूसरा महासमर छिड़ गया। अंग्रेजों ने जबरदस्ती हिन्दुस्तान को भी उसमें शामिल कर दिया। हिन्दुस्तान यह कैसे मान सकता था? अपना विरोध दिखाने के लिए कांग्रेस ने सत्याग्रह करने का फ़ैसला किया।

बापू का ध्यान विनोबा की ओर गया। वह परम-धाम जाकर विनोबा से मिले, अपनी बात बताई, फिर पूछा, "क्या तुम सत्याग्रही बनने को राजी हो ?"

"जीहां।"

"तो तैयारी में कितना समय लगेगा ? तुम्हारे हाथ में जो काम हैं, उनसे फुर्सत पालो।"

विनोबा ने कहा, "मुझे कुछ भी समय नहीं लगेगा। जब आप कहें तैयार हूं। मेरे लिए आपकी आज्ञा और यमराज की आज्ञा एक समान है। जिस समय आप

हुकुम करें, सेवक तैयार है।"

दूसरे दिन सारे देश के सामने विनोबा पहले सत्याग्रही के रूप में आये।

... ...

सन् बयालीस की गर्मियों के दिन थे। बापू ने अंग्रेजी शासन से कहा, "यहां से चले जाओ।" 'भारत छोड़ो' की आवाज उठते ही देशभर में धूम मच गई। आजादी के लिए एक बहुत बड़ा आन्दोलन छेड़ने की योजना बनी। बापू ने सोचा, इसकी शुरूआत उपवास से करनी चाहिए। अपने निकट के मित्रों और आश्रम के साथियों से सलाह की तो सबने कहा कि उपवास करना ठीक नहीं होगा। लेकिन बापू के मन में उपवास की बात जड़ पकड़ रही थी। किसी ने सुझाया कि विनोबा को बुलाकर उनकी राय ली जाय।

विनोबा बुलाये गए। सब बात बताई गई। फिर पूछा गया, "आपकी क्या राय है?"

विनोबा ने फौरन जवाब दिया, "ऐसा बलिदान तो अहिंसा की मर्यादा में आता है।"

इसके बाद मुस्कराते हुए बोले, "और जो काम राम ज्ञानपूर्वक कर सकता है, वह काम हनुमान श्रद्धापूर्वक कर सकता है।"

गांधीजी ने कहा, "अगर चाहो तो दो-चार दिन

विचार करने के बाद राय दे देना।"

विनोबा ने कहा, "आखिर इसमें विचार क्या करना है। बात साफ है। मैं आपसे सहमत हूं।"

सुनकर सब घबड़ा गये। जब विनोबा की राय बापू से मिल गई तो बापू को उनके इरादे से कौन हटा सकता था।

अगस्त का महीना आया। कांग्रेस की बैठक हुई। 'भारत छोड़ो' का प्रस्ताव पास हुआ। दूसरे दिन सवेरे ही बापू और दूसरे नेता पकड़े गये। विनोबा को भी आश्रम में गिरफ्तार कर लिया गया।

जेल पहुंचते ही उन्होंने जेलर से कहा, "आज हमारा भोजन आश्रम में हो चुका है। कल सुबह से उपवास शुरू होगा।"

जेलर परेशानी में पड़ा। पूछा, "बात क्या है? ऐसी यहां क्या बात हुई है, जो आपने यह कदम उठाने की ठानी है?"

"यहां जेल में कुछ नहीं हुआ। लेकिन इस बार बापू ने आंदोलन उपवास के साथ आरम्भ करने का सोचा था। उन्होंने उपवास शुरू किया होगा, मुझे भी वही करना है।"

जेलर चुप होगया।

बापू को इस बात का पूरा ध्यान था। वह जानते थे कि विनोबा जेल जाते ही उपवास शुरू कर देंगे।

लेकिन उन्होंने पहले यह जरूरी समझा कि सरकार से चिट्ठी-पत्री करूं और उपवास बाद में। इसलिए जेल पहुंचते ही बापू ने विनोबा को सूचना भिजवाई कि उपवास अभी नहीं कर रहा हूं, आगे तुम्हें खबर करूंगा।

तब विनोबा ने जेलर को सूचना दे दी कि हम भी अभी उपवास नहीं करेंगे।

...　　...　　...

स्वराज्य होने के बाद अपनी सरकार ने देश की बागडोर हाथ में ली। देखा कि अनाज की कमी है। सरकार की तरफ से जाहिर किया गया कि अनाज की पैदावार बढ़ानी चाहिए। अपने देश में फी एकड़ उपज बहुत कम है। अगर वह बढ़ जाय तो बाहर से गल्ला न मंगाना पड़े।

यह जानकर विनोबा ने अपने परमधाम-आश्रम में खेती का काम शुरू किया। खेती में वह बैल तक का उपयोग नहीं करते थे, यानी जुताई आदि के सारे काम आदमियों के द्वारा होते थे, यहां तक कि सिंचाई के वास्ते जो रहट चलता था उसमें भी बैल काम में नहीं लाये जाते थे। आश्रम के भाई-बहन ही उसे आनन्द के साथ खींचते थे।

रहट चलाते समय प्रार्थना होती थी। गीत-भजन होते थे।

आश्रम की जरूरत की साग-भाजी वहीं पैदा होने लगी। जो बचती, उसे गांव के लोगों को बांट देते।

... ...

१८ अप्रैल, १९५१ को बिनोबा को पहला भूदान मिला।

दूसरे दिन वह आगे बढ़े, रास्ते में एक गांव मिला। वहां के लोगों ने उनका स्वागत किया और कहा, "आप थोड़ा ठहर जायं और कुछ नाश्ता कर लें।"

"क्या नाश्ता मिलेगा?" विनोबा ने पूछा।

"दूध-फल, जो आप चाहें।"

"नहीं, हमें कुछ और ही चाहिए।"

"आपके लिए क्या कमी है, जैसा कहें।"

"अपने गांव के भूमिहीनों के वास्ते आप कुछ जमीन हमें दें।"

यह सुनकर पल-भर के लिए गांव के लोग हैरान हुए कि क्या करें। लेकिन थोड़ी ही देर में एक भाई ने कहा, "पच्चीस एकड़ जमीन तो हम दे सकते हैं।"

विनोबा ने खुशी से उसे स्वीकार किया। कल और आज, दोनों दिन के दान से उनका मन पक्का होगया और भूदान-यज्ञ का शंख बजा दिया।

... ...

विनोबा एक गांव में पहुंचे। बहुत-से लोग जमा होगये। उनमें से एक भाई के कन्धे पर हाथ रखकर

पूछा, "आपके परिवार में कौन-कौन हैं ?"

"माताजी हैं, पत्नी हैं और पांच लड़के हैं ।"

"जमीन कितनी है ?"

"साठ एकड़ । उसीसे गुजर चलती है ।"

"इसमें से हमें क्या मिलेगा ?"

वह भाई चुप ।

"आप हमें अपना छटा लड़का मान लीजिये और छठा हिस्सा दे दीजिये ।"

"बहुत ठीक ! मैं दस एकड़ जमीन देता हूं ।"

... ...

आधी रात बीत चुकी थी । विनोबा का पड़ाव गांव के छोटे-से स्कूल में था । अपने पोते के सहारे, लाठी टेकता-टेकता रामचरन नाम का एक बूढ़ा स्कूल के पास आया । सब सो रहे थें । संयोग से एक भाई पेशाब करने उठे ।

आहट सुनकर बूढ़े ने उन भाई को पास बुलाया और पूछा, "सुना है कि इस गांव में कोई बाबा आया है, जो गरीबों के लिए जमीन का दान लेता है । मेरे पास बारह बीघे जमीन है, मैं उसे देना चाहता हूं ।"

"आपके पास गुजर-बसर का और कोई साधन है?"

"नहीं ।"

"तब ?"

"तब क्या ? मेरे लड़के-बच्चे हैं । मेरा दान ले

लिया जाय।"

उन भाई ने दान-पत्र भरा। उसपर रामचरन का अंगूठा लगवाकर उनसे कहा, अब आराम करो। सबेरे चले जाना। वह बोले, "नहीं, ठंड-ठंड में अभी निकल जाऊंगा। तीन कोस तो कुल है ही!"

सुबह उठकर बिनोबा को बताया गया कि रात को एक अंधा आदमी आया था। विनोबा ने कहा, "रामचरन अंधा नहीं है। अंधे तो हम-आप हैं, जो अपना धर्म नहीं पहचानते। मुझे तो उस भक्त के रूप में राम के चरण ही आशीर्वाद देने आये थे।"

... ...

"आप हमें कितनी जमीन देंगे?"—एक राजा से विनोबा ने कहा।

"जितनी आप कहेंगे, उतनी। हमारा तो तरीका है कि जो जितना मांगता है, उतना दे देते हैं। एक भाई आये, इक्कीस एकड़ ले गये। दूसरे भाई आये, हजार एकड़ ले गये।"

"अच्छा यह आपका निश्चय है।"

"जीहां।"

"तो हमें यह बताइये कि आपके पास जमीन है कितनी?"

"एक लाख एकड़ पड़ती और बारह सौ एकड़ काश्त की जमीन है।"

"हम चाहते हैं कि अपनी कुल-की-कुल पड़ती जमीन हमें दे दें और काश्त में से छठा हिस्सा।"

"मंजूर। एक लाख एकड़ पड़ती और दो सौ एकड़ खेती की जमीन आपको समर्पित।"

... ...

एक बहुत बड़े जमींदार विनोबा के पास पहुंचे। कहने लगे, "बाबा, आजकल आप हमारे जिले में घूम रहे हैं। यहां आपने दूसरी जगह से कुछ अन्तर देखा?"

"क्या?"

"हमारे यहां की जमीन बहुत उपजाऊ है। इसमें तम्बाकू पैदा होता है। इसलिए इसके दाम चार हजार, पांच हजार रुपये एकड़ तक जाते हैं।"

"अच्छा, ऐसा कीजिये कि एक गड्ढा खोदिये।" विनोबा ने कहा, "फिर उसमें अपना चार हजार, पांच-हजार रुपया डालिये। चाहे नोट डालिये, चाहे सिक्का! ऊपर से पानी दीजिये। देखें, कितनी फसल पैदा होती है?"

वह बोले, "बाबा, मैं आपका मतलब नहीं समझा।"

विनोबा ने कहा, "हम आपसे यह समझना चाहते हैं कि भला जमीन का रुपये से कोई वास्ता है?"

जमींदार साहब असमंजस में पड़े। कुछ देर बाद बोले, "आखिर, जमीन की कीमत तो. . ."

"जमीन की कीमत! जिसे आप माता कहते हैं,

उसकी इज्जत के दाम लगाते हैं ? इससे बढ़कर ज्यादती क्या होगी ?"

"लेकिन जमीन के मालिक तो हम हैं ।"

"मालिक आप हैं ! जमीन को 'विष्णुपत्नी' कहा गया है । सिवाय ईश्वर के उसका कौन मालिक हो सकता है ? अगर आप मालिक हैं तो मैं देखूं, अपने साथ आप कितनी जमीन ले जाते हैं ?"

"आपके विचार से कौन मालिक है ?"

"मालिक ईश्वर है, या ईश्वर की तरफ से गांव है । गांव की जमीन—न मेरी, न तेरी, न किसीकी । प्रेम से उसका आपस में बंटवारा होना चाहिए ।"

"ठीक है आपकी बात । मैं समझ गया । अबतक हम लोग अंधकार में थे । आप सच कह रहे हैं—जब-तक जमीन की निजी मालकियत रहेगी, तबतक न पैदावार बढ़ेगी, न देश का भला होगा ।"

... ...

कुछ ईसाई विनोबा से मिलने आये । बातचीत होने लगी । थोड़ी देर बाद उनमें से एक ने कहा, "बाबा जी ! आपकी बात हम समझ गये । आप जमीन की निजी मालकियत को पाप मानते हैं ।"

"जीहां !"

"लेकिन, बाइबिल में इस स्वामित्व को अपना पवित्र अधिकार कहा गया है । आप कहते हैं, उसे

छोड़ दो। क्या यह धर्म के विरुद्ध न होगा।"

"धर्म के विरुद्ध तो तब होता जब मैं जबरदस्ती से या डरा-धमकाकर आपकी चीज छीनता। लेकिन

विनोबा और ईसाइयों में बातें हुईं।

मैं तो यह कह रहा हूं कि अपनी खुशी से आप ही स्वामित्व छोड़ दीजिये। क्या आप स्वामित्व-विसर्जन को स्वामित्व से बढ़कर धर्म नहीं कहेंगें ?"

... ...

"आजकल जब रेल, हवाई जहाज आदि के साधन मौजूद हैं तो आपका पैदल चलना मेरी समझ में नहीं आता।" एक नौजवान ने विनोबा से कहा।

"तुम्हारा सवाल ठीक है। लेकिन हमें जमीन

चाहिए, इसलिए जमीन पर चलते हैं। हवा की जरूरत होती तो हवाई जहाज में उड़ते फिरते।"

नौजवान हँस पड़ा। बोला, "यह तो ठीक है, लेकिन पैदल ही क्यों ?"

"इसके तीन मुख्य कारण हैं। उनमें एक तो यह कि पैदल चलने के माने हैं कि हम अपने समय के मालिक हैं, किसी दूसरे के मुहताज नहीं हैं और दूर-से-दूर गांव में पहुंच सकते हैं।"

"हां, सब गांवों में सवारी नहीं जाती।"

"यह बात। दूसरे यह कि आसमान के नीचे खुली हवा में घूमने से ताजे-ताजे नये-नये विचार आते हैं और चित्त में सदा आनन्द रहता है। तीसरे, हमें लोक-शक्ति की खोज करनी है, जिसके द्वारा अहिंसा और शान्ति से अपनी समस्याएं हल करने का उपाय हमारे हाथ आयगा। यह तो आप कबूल करेंगे कि पदयात्रा से जितना लोक-सम्पर्क होता है, उतना किसी दूसरी तरह नहीं।"

"आपकी बात ठीक है। आज लोकशक्ति जाग्रत कर उसके सही संगठन की बड़ी जरूरत है।"

"यही तो मैं कर रहा हूं।"

... ...

आज के जमाने में सियासत का बोलबाला है, लेकिन आप कहते हैं कि सियासत से अब हमारा काम

नहीं चलेगा ।"

"जीहां, सियासत और मजहब, दोनों ही बेकार साबित होनेवाले हैं । इनका दौर तभी तक था, जब ये इन्सान से इन्सान को जोड़ने का काम करते थे। आज तो तोड़ने का काम करते हैं ।"

"यह जरूर है। आज की सियासत माने रंजिश, कलह, दुश्मनी !"

"आप देखिए, जो पैसिफिक महासागर एशिया को अमरीका से अलग करता था, वही आज उसे जोड़ने-वाला बना है। आज के विज्ञान का तकाजा है कि जो चीज एक को दूसरे से तोड़ेगी या काटेगी, वह नहीं रहेगी ।"

"तो सियासत की कोई जगह ही नहीं ।"

"जी नहीं। मैंने तो सूत्र बनाया है—

विज्ञान+सियासत = सर्वनाश

विज्ञान+रूहानियत=सर्वोदय

अब इस देश और दुनिया के मसले सियासत से नहीं, रूहानियत से हल होंगे ।"

रूहानियत से तो मतलब फिर वही मजहब से।"

"रूहानियत का मतलब है मजहब के अन्दर का गूदा, जो सब मजहबों में एक-सा है ।"

"जरा और साफ-साफ बतलाइये ।"

"देखो, पुराना मजहब कहता था कि ईश्वर एक

ह, अल्लाह एक है। लेकिन ईश्वर के एक होने पर भी, इन्सान-इन्सान में झगड़े-फसाद,लड़ाइयां हुईं। रूहानियत कहती हैं कि इन्सान एक है और इन्सान-इन्सान के बीच की सारी दीवारें मिटनी चाहिए। जो-जो चीजें इन दीवारों को कायम रखती हैं, वे भी खत्म होनी चाहिए।"

"ऐसा होजाय तब तो कहना ही क्या ?"

"यह जरूर होगा, जमाने की मांग जो है।"

... ...

एक गांव का ग्रामदान होगया। वहां के सभी भूमिवानों ने अपनी सारी जमीन दान में दे दी। वहां न कोई भूमि का मालिक रहा, न कोई भूमि-हीन।

"आज तो जमीन दे दी; लेकिन कल किसीने कुछ कहा तो जमीन लोगे ?" विनोबा ने कहा।

"जी नहीं ऐसा नहीं हो सकता।

"ग्रामदान किसलिए दिया ?"

"सुखी होने के लिए।"

साहूकार आपको सतायेंगे तो क्या करोगे ?"

"हम सब एक होगये हैं। अब डर किस बात का ?"

"अबतक तुममें से आधे (भूमिवाले) खाते थे और आधे (बेजमीन) भूखे रहते थे। लेकिन अब सबके ऊपर मुसीबत एक साथ आयगी।"

"आयगी तो साथ-साथ उसका सामना करेंगे। हम

अब जियेंगे तो एक साथ जियेंगे, मरेंगे तो एक साथ मरेंगे।"

... ...

चार-चार की कतार। सबसे आगे विनोबा। उनके बाद कोई साठ बहनें। उनके पीछे आठसौ के ऊपर भाई। कदम मिलाती हुई यह सेना चली जा रही थी। अजमेर से कूच शुरू हुआ और साढ़े दस मील चलकर गगवाना पर खत्म।

वहां चंद्राकार शक्ल में सब शान्ति-सैनिक जमा होगये। उनके बीच एक मेज पर विनोबा खड़े होगये।

उन्होंने हाथ जोड़कर सबको प्रणाम किया। फिर आंखें मीच ली। कुछ कहना चाहते थे, मगर गला भर आया। आंखों से आंसुओं की धारा बह चली। कई मिनट तक चुप खड़े रहे। फिर एक बार हाथ जोड़कर प्रणाम किया और नीचे उतर आये।

इस तरह शान्ति-सेना का श्रीगणेश हुआ।

... ...

"सर्वोदय के लिए हम क्या कर सकते हैं?" घर-गिरस्तीवाले एक आदमी ने पूछा।

"पड़ोसी को खिलाकर खायं।"

"यह कैसे हो?"

"अपने घर में एक पात्र रखिये। उसमें घर का सबसे छोटा बालक एक मुट्ठी अन्न रोज सबेरे डाला

सर्वोदय-पात्र में घर का सबसे छोटा बच्चा रोज एक मुट्ठी अन्न डाले।

करे। पहले उस पात्र में अनाज पड़े, फिर भोजन हो।"

"यह सर्वोदय-पात्र तो प्रतीक रूप में हुआ।"

"जीहां, यह मेरी कम-से-कम मांग है। देश के हर घर में सर्वोदय-पात्र होना चाहिए।"

... ...

एक बार विनोबाजी को स्कूल के बहुत-से बच्चे खड़े मिले। उन्होंने जोरों से स्वागत में कहा, "जय-हिन्द !"

विनोबा ठहर गए। बोले, "एक बात बताओगे।"

"पूछिये।"

"जयहिन्द के माने क्या समझते हो ?"

"अपने देश की जय हो, उसका भला हो।"

"और दूसरे देश का क्या हो ?"

सब चुप। थोड़ी देर बाद एक लड़का बोला, "उसका भी भला हो।"

"ठीक ? लेकिन 'जयहिन्द' में वह बात कहां आती ह ? तुम 'जयहिन्द' कहो, चीनवाले 'जय चीन' कहें, रूसवाले 'जय रूस' कहें, अमरीकावाले 'जय अमरीका' कहें, तो आपस में प्रेम-भाव बढ़ेगा ?"

"नहीं बढ़ेगा। अपना-अपना लोभ बढ़ेगा ?"

"तो यह तो ठीक नहीं है न ? हमें ऐसा मंत्र बोलना चाहिए, जिससे सारी दुनिया में मेल-मुहब्बत पैदा हो। वह मंत्र है—"जय जगत !"

सब बालकों ने ऊंची आवाज में कहा, "जय जगत !"

विनोबा ने उनको प्रणाम किया और आगे बढ़ गये।

●

आन-बान के रखवारे

: १ :

खट-खट-खट-खट तेगा बाजे, बाजे छपकि-छपकि तरवार।
धड़-धड़-धड़-धड़ गोला छूटैं, धूंवां-धूरि एक ह्वै जाय॥
गिरे सिपाही दोनौं दल के, अपनी-खींचि-खींचि तरवार।
निकरे खांड़ा बर्दवान के, औ' नागौदी केर कटार॥...

जोश से भरी हुई ये लाइनें आल्हखंड की हैं, जिसे हमारे देश के लोग 'आल्हा' के नाम से जानते हैं। हमारे देश का वह बहुत ही मशहूर ग्रंथ है। लोगों में जितना अधिक प्रचार इस आल्हा का है, उतना रामायण को छोड़कर और किसी ग्रंथ का शायद ही हो। गांवों में आल्हा का ऐसा समा बंधता है कि सारी रात बीत जाती है और पता भी नहीं चलता। आसपास के गांवों के भी लोग इट्ठे हो जाते हैं और आल्हा के रस में ऐसे डूब जाते है कि उन्हें कुछ ध्यान ही नहीं रहता।

इस तरह हमारे गांवों और कस्बों में आल्हा का बहुत गहरा स्थान है। उसका रूप कहीं-कहीं थोड़ा बदल जाता है, लेकिन उसकी लय, छंद, स्वर और उसका प्रभाव सभी जगह एक-सा होता है। अल्हैत लोग कथा

में अपनी तरफ से कुछ-न-कुछ नमक-मिर्च मिलाते रहते हैं। इसीलिए उसमें फर्क पड़ जाता है। आल्हा जगनिक नाम के कवि ने लिखा था। वह महोबा के राजा परमाल के दरबार में चारण था। छोटे-मोटे प्रसंगों को छोड़कर आल्हा की कथा सब जगह एक ही है।

आज से सात-आठसौ साल पहले चंदेरी में परमाल नाम के राजा राज्य करते थे। उन्होंने राजा मालवंत की कन्या मल्हना से विवाह किया। उसमें उन्हें महोबा का राज्य मिला और वहां उन्होंने कालिंजर का किला बनवाया। मल्हना की चार बहनें और माहिल नाम का एक भाई था। महोबे का राज्य मिलने पर परमाल ने माहिल को अपना मंत्री बनाया। माहिल स्वभाव का बड़ा दुष्ट था। इधर की बात उधर भिड़ाने में उसे बड़ा आनंद आता था।

एक बार राजा परमाल जंगल में शिकार खेलने गए। वहां उन्होंने दो जंगली भैंसों को आपस में लड़ते देखा। उन्होंने अपने सरदारों से कहा कि इन भैंसों को हटा दो; लेकिन किसी सरदार को ऐसा करने की हिम्मत न हुई। तभी दो बालक वहां आ पहुंचे ओर उन्होंने भैंसों को अलग कर दिया। राजा परमाल ने उनसे पूछा, "तुम लोग कहां के रहनेवाले हो और तुम्हारे माता-पिता का क्या नाम है ?" उन्होंने जवाब दिया,

"हमें एक साधु ने इसी जंगल में रहकर महोबा के राजा परमाल की राह देखने को कहा है, सो हम यहीं रुककर उनकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।" यह सुनकर राजा परमाल बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने उन दोनों बालकों को अपने साथ लाकर अपनी रानी मल्हना के हाथों सौंप दिया। दोनों के नाम वैसे जस्सराज और बच्छराज थे, लेकिन उन्हें पुकारा जाता था देशराज और वत्सराज के नाम से। दोनों ही बड़े तेजस्वी और रूपवान थे। हथियार चलाने में कोई उनका सानी नहीं था। चूंकि ये बन में मिले थे, इसलिए इन्हें 'बनाफर' भी कहते थे। रानी मल्हना की एक बहन देवलदेवी से देशराज का और दूसरी बहन तिलका से वत्सराज का विवाह हो गया।

उस जमाने में एक बहुत मशहूर मेला बिठूर में होता था। रानी मल्हना और देवलदेवी दोनों उस मेले में गईं। मांडोगढ़ के राजा जम्बे का लड़का करिंगाराय भी वहां आया था। करिंगाराय की बहन ने उससे कहा था कि मेले से मेरे लिए कोई अनोखी चीज लाना। करिंगाराय मेले में किसी अनोखी चीज की तलाश में घूम रहा था कि उसकी भेंट माहिल से हुई। माहिल ने बताया कि अनोखी चीज़ तो इस मेले में बस एक ही है और वह है मेरी बहन देवलदेवी का नौलखा

हार। तुम्हारी हिम्मत हो तो उस नौलखा हार को छीनकर अपनी बहन के लिए ले जाओ। हिम्मत न हो तो फिर कोई भी मामूली-सी चीज ले जा सकते हो।

माहिल की बात सुनकर करिंगाराय को गुस्सा आ गया। उसने शान के साथ कहा, "अगर मुझमें क्षत्रियों का कोई भी गुण होगा तो मैं नौलखा हार लेकर ही लौटूंगा।" इसके बाद करिंगाराय ने अपनी सेना सजवाई और उस जगह को घेर लिया, जहां देशराज अपनी पत्नी के साथ ठहरा हुआ था। देश-राज अकेला था और उसकी पत्नी गर्भवती थी। उधर करिंगाराय बड़ा ताकतवर और भयंकर राजा माना जाता था। बेचारा देशराज बड़ी मुसीबत में फंस गया। वह सोचने लगा कि नौलखा हार देकर अपनी जान किसी तरह छुड़ाए। मगर अकसर मुसीबत में जब कोई मददगार नहीं होता, तो भगवान मदद करते हैं।

हुआ यह कि इस मेले में सैयद मीर ताल्हन नामक एक सरदार मौजूद था। करिंगाराय का यह अन्याय उसे बड़ा बुरा लगा। उसने कहा, "हमने इस मेले में आते वक्त रास्ते में मोहबे का पानी पिया है। उस मोहबे पर जब मुसीबत आई है तो हमारा

धरम है कि उसकी मदद करें।" यह कहकर मीर ताल्हन ने अपने बेटों और सिपाहियों को लेकर मांड़ो

मीर ताल्हन ने कुरान लेकर और देशराज ने गंगाजल लेकर प्रतिज्ञा की।

की सेना पर धावा बोल दिया। घमासान लड़ाई हुई आखिर करिंगाराय के पैर उखड़ गये। वह मैदान छोड़कर भाग खड़ा हुआ। देशराज ने मीर ताल्हन को गले लगाया। देशराज ने गंगाजल और मीर ताल्हन ने कुरान लेकर प्रतिज्ञा की कि हम हमेशा एक दूसरे का साथ देंगे।

: २ :

बिठूर के मेले में हारने के बाद से करिंगाराय

हर समय इसी ताक में रहता था कि किसी-न-किसी तरह देशराज और वत्सराज से बदला चुकावे। एक दिन माहिल अपनी घोड़ी पर बैठकर मांड़ो पहुंचा और उसने कींरगाराय से कहा कि हार को ब्याज सहित चुकाने का एक ही उपाय है और वह यह कि तुम अमावस की रात में देशराज और वत्सराज पर हमला करो। कींरगाराय ने ऐसा ही किया। झिंझावट के किले में आधीरात के समय चुपके से घुसकर उसने दोनों भाइयों की मुश्कें बंधवा लीं। इसके बाद देवलदेवी से उसने नौलखा हार छीना और महल में लूट-मार मचाकर दोनों भाइयों को अपनी राजधानी में ले आया। वहां पहुंचकर कींरगाराय ने दोनों वीरों को बुरी तरह से सताया। इतना ही नहीं, उनका सिर कटवाकर अपने महल के कंगूरे पर लटकवा दिया। धड़ को कोल्हू में पिरवाकर तेल को मोहबे भेजा। इतना करने के बाद कींरगाराय के दिल की आग बुझी।

आल्हा और ऊदल इन्हीं देशराज के लड़के थे। पिता की मृत्यु के समय आल्हा पांच बरस का और ऊदल मां के पेट में था। इसीलिए दोनों बच्चे अपने पिता की मृत्यु के बारे में कुछ भी नहीं जानते थे। वत्सराज के लड़के मलखान और राजा परमाल के लड़के ब्रह्माजित के साथ ही आल्हा-ऊदल की भी

शिक्षा-दीक्षा हुई। रानी मल्हना इन चारों को अपना ही पुत्र समझती थीं। उन्होंने इन लड़कों को बाबा अमरनाथ के सुपुर्द कर दिया। बाबा अमरनाथ सिद्ध पुरुष थे। उन्होंने बालकों को बड़ी अच्छी तरह से शस्त्र-विद्या दी। रानी मल्हना ने हर लड़के को देवताओं के राजा इंद्र के घोड़े द्वारा उत्पन्न एक-एक घोड़ा दिया। ये घोड़े बड़े ही स्वामिभक्त और पराक्रमी थे। कहा जाता है कि ये लड़ाई के मैदान में उड़ते-फिरते थे। ऊदल का रसबेंदुल तो लड़ाई में सामने आनेवाले दुश्मन को दांत से काटता और पीछे के दुश्मनों को दुलत्ती झाड़कर मार डालता था।

एक बार इन बालकों को पता चला कि हिंगलाज के मंदिर में देवी अपने भक्तों के सामने प्रकट होकर मुंहमांगा वरदान देती है। ये दोनों भी देवी का दर्शन करने के लिए तैयार हो गए। राजा परमाल ने अपनी सेना उनके साथ कर दी। आल्हा को सेनापति बनाया। हिंगलाज का रास्ता बड़ा ही बीहड़ था। बीच में बारह कोस के वन में जंगली हाथी मिलते थे, उससे आगे शेर। अगर इनको किसी तरह पार भी कर लिया जाता तो आगे नकटे देव की चौकी थी। नकटा देव आदमियों को मारकर खा जाता था।

आल्हा-ऊदल के पराक्रम से ये सब बाधाएं पार

हो गईं और सब लोग देवी के मंदिर में पहुंचे। देवी भक्तों के सामने प्रकट हुई और अपना खप्पर आगे बढ़ाकर बोली, "किस क्षत्रिय में इतना साहस है कि अपना सिर अपने ही हाथों से काटकर मुझे खून पिलावे ?"

देवी के शब्द सुनकर बाकी के योद्धा तो मूरती की तरह खड़े रह गएं, पर आल्हा ने आगे बढ़कर अपनी गर्दन काटकर देवी के चरणों में चढ़ा दी। देवी ने आल्हा का सिर अपने हाथों में ले लिया और उसके शरीर का लहू पी डाला ! उसके बाद अमृत की एक बूंद डालकर उसने आल्हा को फिर जीवित कर दिया। कहते हैं, अमृत के प्रभाव से आल्हा अमर हो गया और उसके शरीर में लहू की जगह दूध बहने लगा। देवी ने ऊदल के शरीर को छूकर वज्र के समान बना दिया और उसमें सौ हाथियों का बल भर दिया। यही नहीं, देवी ने मलखान, ब्रह्मा और महोबा के दूसरे वीरों को भी वरदान दिये।

एक बार की बात है। आल्हा-ऊदल शिकार खेलते-खेलते माहिल की रियासत उरई में पहुंच गए। वहां जंगल के रखवालों से उनकी मार-पीट हो गई। इसपर माहिल ने उनसे कहा, "कमजोर रखवालों को मारने में क्या बहादुरी है ? ऐसे ही हेकड़ीवाले हो तो जाकर

अपने पिता की मौत का बदला क्यों नहीं लेते ?"

आल्हा-ऊदल यह सुनकर सन्न रह गए। वे तो अपने पिता की मृत्यु के बारे में कुछ भी नहीं जानते थे। वैसे ही भूखे-प्यासे वे वापस आये और उन्होंने अपनी मां से अपने पिता की मृत्यु का हाल पूछा। देवलदेवी रोने लगीं और उन्होंने अपने लड़कों को करिंगाराय के अत्याचार का पूरा किस्सा कह सुनाया। बोलीं, "मेरी सारी आशा तुमपर ही है। सोचती थी कि किसी दिन बेटे बड़े होकर अपने बाप की हत्या का बदला लेंगे।"

सारी कहानी सुनकर आल्हा-ऊदल का खून खौलने लगा, उनकी भुजाएं फड़कने लगीं। ऊदल ने कहा, "मैं जबतक करिंगा से बदला नहीं ले लूंगा, महोबे का अन्न-जल ग्रहण नहीं करूंगा।"

: ३ :

जब आल्हा-ऊदल महोबे की सेना सजाकर मांड़ो पर चढ़ाई करने चले तो दूर-दूर से शूर-वीर उनकी मदद के लिए आने लगे। बनारस के सरदार मीर ताल्हन और कन्नौज के राजा जयचंद के दत्तक पुत्र लाखन भी महोबे की सेना के साथ हो लिये। मांड़ोगढ़ के पास पहुंचकर महोबे की सेना ने पड़ाव डाल दिया। पहले तो आल्हा, ऊदल, मलखान और मीर ताल्हन जोगियों का भेस बनाकर मांड़ोगढ़ का हाल जान आये,

फिर हमला किया गया। बड़ी भयंकर लड़ाई हुई। करिंगाराय पचसावद हाथी पर बैठकर लड़ने आया। इस हाथी को वह देशराज से छीनकर लाया था। पर ऊदल की वीरता के सामने मांड़ो की सेना को टिकता हुआ न देखकर करिंगा ने पचसावद की सूंड में सोलह मन की सांकल पकड़ा दी। पचसावद ने ऊदल को इस
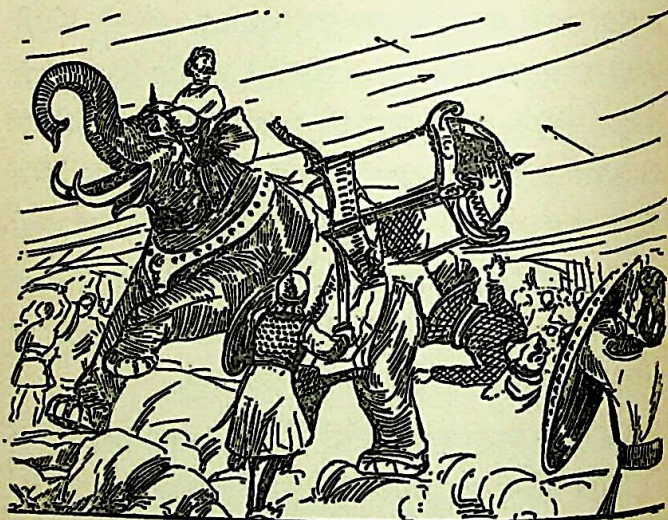
करिंघाराय हौदेसहित नीचे आ गिरा।

सांकल में बांध लिया। लेकिन उसके साथियों ने उसे कोशिश करके छुड़ा लिया।

युद्ध में अद्‌भुत पराक्रम दिखाता हुआ ऊदल करिंगा के हाथी के पास पहुंचा और उसने हौदे के रस्से को काट दिया। रस्सा कटते ही करिंगाराय हौदेसहित

धरती पर जा गिरा। महोबे के वीर करिंगा पर टूट पड़े। अपने राजा की यह दशा देखकर मांड़ो की सेना के पैर उखड़ गये। इसके बाद करिंगा और जम्बे का वध महोबेवालों ने ठीक उसी तरह किया, जैसेकि देशराज और वत्सराज का हुआ था। करिंगा महोवा से नौलखा हार, पपीहा घोड़ा, पचसावद हाथी और लाखा पातुर को लूट लाया था। इन सबको आल्हा-ऊदल ने वापस छीन लिया। मांड़ो को महोबा की सेना ने लूट लिया और किले के कंगूरे पर लटकता हुआ अपने पिता का सिर उतारकर आल्हा और ऊदल घर लौटे। महोबा पहुंचकर उस सिर का विधिपूर्वक दाह-संस्कार किया।

मांडोगढ़ की विजय से सब जगह बनाफ़रों की धाक जम गई और आल्हा-ऊदल की शूरवीरता की चर्चा घर-घर होने लगी।

हमारे देश में उस समय स्वयंवर की प्रथा थी। लड़की के विवाह की शर्तें सबको बतला दी जाती थीं और पुरोहितों तथा नाइयों को वर की खोज में दूर-दूर तक भेजा जाता था। जो राजा इन शर्तों को पूरा करता था या जिसे कन्या वर लेती थी, वह भी युद्ध करने तथा युद्ध में विजयी होने के बाद ही कन्या से विवाह कर पाता था। मांड़ोगढ़ जीतने पर ऊदल ने

कांरगाराय की बहन बिजना से शादी कर ली थी। उसके बाद आल्हा तथा उसके साथी नैनागढ़ के राजा राघोमच्छ की पुत्री मछला के स्वयंवर में गए। इस स्वयंवर की शर्तें बड़ी टेढ़ी थीं। राजा राघोमच्छ को युद्ध में हराने के अलावा वर को तीन कठिन काम और भी करने थे। एक तो खूनी हाथी के साथ बग़ैर किसी हथियार के लड़ना और उसे मार डालना, दूसरे अष्ट धातु से बने विजय-स्तंभ को तलवार के एक ही वार से काट गिराना। तीसरे, कढ़ाह में उबलते हुए तेल में खड़े होकर ऊपर टंगी और चक्कर खाती हुई मछली की परछाईं तेल में ही देखकर, बाण से इसकी आंख बेध देना!

इन सभी शर्तों को बनाफरों ने पूरा कर दिया और नैनागढ़ के राजा को युद्ध में भी हरा दिया। मछला का विवाह आल्हा से हो गया। कुछ समय बाद आल्हा के एक लड़का हुआ, जिसका नाम इंदल रखा गया। मलखान का विवाह कांसू के राजा गजराज की कन्या गजमोतन के साथ हुआ। इस विवाह के लिए भी बड़ी लड़ाई करनी पड़ी थी। गजराज का एक बूढ़ा सामंत बड़ा ही विलक्षण था। उसके खून की एक-एक बूंद से सौ-सौ योद्धा पैदा हो जाते थे। गजराज के दो पुत्र लोहा और मोती भी बड़े वीर थे। लेकिन महोबा के

वीरों ने कांसू राज्य की ईंट-से-ईंट बजा दी और राजा गजराज को गजमोतन के साथ मलखान का विवाह करना पड़ा। राजा परमाल की दो लड़कियों—सुरजा और चंद्रावलि के विवाह को लेकर भी लड़ाइयां हुईं, लेकिन बनाफरों के पराक्रम के कारण महोबा की नाक हमेशा ऊंची रही।

राजा परमाल के लड़के ब्रह्मा या ब्रह्माजित के विवाह ने वैर के भयंकर बीज बो दिये। दिल्ली के राजा पृथ्वीराज ने अपनी पुत्री बेला के विवाह के लिए लग्न-पत्रिका भिजवाई थी। बनाफरों ने पुरोहितों और नाई को पकड़कर नारियल ब्रह्मा के लिए रखवा लिया और महोबे की सेना लेकर ब्रह्मा का विवाह करने दिल्ली पहुंच गए। विवाह की शर्त पूरी करने के लिए पहले तो ऊदल ने जंगली हाथी का वध किया, उसके बाद त्रिशूलों पर नंगे पांव नृत्य किया। मलखान अपने उड़न-बछेरे पर बैठकर क़िले के ऊंचे कंगूरों पर रखे कलशों को उतार लाया। ब्रह्मा ने खांड़े के एक ही वार से अष्टधातु का विजय-स्तंभ काट गिराया। अंत में बड़े जोर की लड़ाई हुई और पृथ्वीराज को अपनी मरज़ी के खिलाफ इस संबंध के लिए राज़ी होना पड़ा, लेकिन विवाह के अवसर पर बेला ने कहला भेजा कि मैं तो द्रौपदी के कपड़ों और

गहनों को पहनकर ही फेरे लूंगी।

महोबे के वीर इस कठिनाई में भी पीछे हटनेवाले नहीं थे। आल्हा को जगदम्बा का इष्ट था। उसने उनकी आराधना शुरू कर दी।

देवी ने प्रसन्न होकर द्रौपदी के वस्त्र और आभूषण लाकर आल्हा को दे दिये और उन्हींको पहनकर बेला यज्ञ-वेदी पर आई। इस प्रकार बेला तथा ब्रह्मा का विवाह हुआ। पर विवाह हो जाने के बाद भी राजा पृथ्वीराज ने ब्रह्मा के साथ बेला को विदा नहीं किया। उसने कहा कि हमारे वंश की नीति है कि कन्या को गौने के समय विदा किया जाता है। इसलिए महोबावालों को खाली हाथ ही लौटना पड़ा और महोबा और दिल्ली के राजाओं में किसी तरह का मेल-जोल पैदा नहीं हो सका।

माहिल इस बीच अपनी चाल चल रहा था। उसने एक ओर तो पृथ्वीराज के कान भरे, दूसरी ओर राजा परमाल से कहा कि आपकी मित्रता दिल्ली के राजा से तभी हो सकती है जब आप बनाफरों के बछेड़े दिल्ली के राजा को दे दें। राजा परमाल स्वभाव से बड़े शांत और डरपोक थे। उन्हें लड़ाई-झगड़ा पसंद न था। उन्होंने सोचा कि अगर घोड़े देने से ही बात सुलझ जायगी तो अच्छा होगा।

उन्होंने आल्हा-ऊदल को बुलाकर कहा कि पांचों घोड़े दिल्ली भिजवा दो। लेकिन आल्हा ने कहा कि हम घोड़े नहीं दे सकते। इसका मतलब होगा अपमान सहन करना। हमारी जान भले ही चली जाय, हम ऐसा नहीं कर सकते। यह सुनकर राजा परमाल को बड़ा क्रोध आया। उन्होंने कहा कि यहां सवाल तुम्हारे अपमान का नहीं है, यह तो मेरी आज्ञा है, जिसका तुम्हें पालन करना ही चाहिए। आल्हा ने जवाब दिया, "महाराज, आपके लिए हमारे मन में बड़ा आदर है, लेकिन आपकी यह आज्ञा हम लोग नहीं मान सकते।" राजा परमाल लाल-पीले हो गये। उन्होंने कहा, "अगर ऐसी बात है तो तुम जितनी जल्दी हो सके, महोबा छोड़कर चले जाओ। हमारे राज में खाना खाओ तो गो-मांस के बराबर, पानी पियो तो शराब के बराबर।"

इतना सुनते ही आल्हा, ऊदल, इंदल और ढेवा महोबा छोड़कर जाने की तैयारी करने लगे। इस समाचार से सारे महोबा में व्याकुलता फैल गई और सब लोग कहने लगे कि अगर आल्हा-ऊदल चले जायंगे तो चारों तरफ फैले हुए दुश्मनों से महोबा की रक्षा कौन करेगा। पर राजा परमाल ने किसीकी न सुनी और ये बनाफर वीर अपने परिवारों के साथ

राज्य से बाहर चल पड़े। रास्ते में तरह-तरह के दुःख सहते हुए भूखे-प्यासे कन्नौज की ओर बढ़े। जब कन्नौज के पास पहुंचे तो कन्नौज के राजा जयचंद को उनके आने की खबर मिली। राजा जयचंद का दत्तक पुत्र लाखन इन लोगों का मित्र था। वह बड़े उत्साह के साथ मिलने आया। बड़े आदर के साथ आल्हा-ऊदल राजा जयचंद के दरबार में लाये गये। लेकिन जब जयचंद ने सारा हाल सुना तो वह बोला कि जब तुम लोग महोबा से निकाल दिये गए हो तो मैं तुम्हें कन्नौज में कैसे रख सकता हूं! यह सुनकर ऊदल को बड़ा गुस्सा आया और वे सब फ़ौरन कन्नौज छोड़ देने के लिए तैयार हो गये। जब वे कन्नौज के फाटक से निकल रहे थे तो दो मतवाले हाथी उनके रास्ते में अड़ गए। ऊदल घोड़े पर सवार था। उसने अपना भाला इतने जोर से फेंका कि एक हाथी की गर्दन को चीरता हुआ दूसरी तरफ़ निकल गया। हाथी वहीं ढेर हो गया। यह देखकर दूसरा हाथी चिंघाड़ता हुआ ऊदल की ओर बढ़ा। ऊदल फ़ौरन घोड़े से उतर पड़ा और उसने हाथी की सूंड़ अपने पैरों के नीचे दबाकर उसके दोनों दांत पकड़कर उखाड़ लिये। हाथी के मुंह से खून की धारा बहने लगी और वह जान लेकर भाग निकला।

राजा जयचंद और उसके दरबारी यह सब देख रहे थे। ऊदल का ऐसा पराक्रम देखकर सब उसकी सराहना कर रहे थे। राजा जयचंद पर भी बड़ा असर पड़ा। उन्होंने उसी समय अल्हा-ऊदल को गले लगाया और कहा आज से तुम लोग कन्नौज के हुए, यहीं रहो और हमें अपना समझो। इस तरह आल्हा-ऊदल अपने परिवार तथा साथियों के साथ कन्नौज में रहने लगे।

: ४ :

उधर राजा पृथ्वीराज और राजा परमाल में कोई भी समझौता न हो सका। क्योंकि एक ओर तो पृथ्वीराज को अपने मनचाहे पांचों घोड़े नहीं मिले, दूसरी ओर परमाल की बहू बेला विदा होकर महोबा नहीं आई। ऐसी हालत में माहिल ने अपने कुचक्र का जाल फिर फेंका। उसने परमाल से कहा, "अगर तुम ब्रह्मा को मेरे साथ अकेले दिल्ली भेज दो तो मैं बेला का गौना करा दूंगा। पृथ्वीराज बेला को उसकी ससुराल इसीलिए नहीं भेजते थे, क्योंकि अभी तक बनाफर लोग तुम्हारे यहां थे। अब कोई कठिनाई नहीं रही।" माहिल की यह बात सुनकर राजा परमाल ने ब्रह्मा को अकेले ही भेजना मंजूर कर लिया। ब्रह्मा दिल्ली पहुंचा, लेकिन पृथ्वीराज अपने पुराने वैर को अभी भूला नहीं था। उसके पुत्र ताहर को मालूम था कि ब्रह्मा बहुत बलवान

है, लेकिन उसे यह भी पता था कि ब्रह्मा के सिर के पिछले भाग पर चोट करने से उसकी मृत्यु हो सकती है। ताहर ने ऐसा ही किया। ब्रह्मा घायल होकर गिर पड़ा। जब बेला ने यह समाचार सुना तो वह डोले में बैठकर ब्रह्मा के पास आई, लेकिन ब्रह्मा ने उसका मुंह देखने से भी इन्कार कर दिया। ब्रह्मा बोला, "मैं ऐसी स्त्री का मुंह नहीं देख सकता, जिसके पिता और भाई ऐसे नीच और कायर हों।" बेला ने जब बहुत मिन्नतें कीं तो ब्रह्मा ने कहा, "अगर तू अपने भाई ताहर का सिर काट

भाई के कटे हुए सिर को बेला ने पति के चरणों में रख दिया।

कर मेरे पास ले आये तो में तुझे साध्वी मान सकता हूं।" बेला अपने भाई की अनीति पर बहुत नाराज थी।

वह उसी समय ब्रह्मा का भेष बनाकर चली और उसने ताहर की सेना पर चढ़ाई कर दी। इस लड़ाई में ताहर अपनी बहन बेला के हाथों मारा गया और उसके कटे हुए सिर को लाकर बेला ने अपने पति के चरणों में रख दिया। यह देखकर ब्रह्मा का क्रोध कम हुआ और उसने कहा कि मैं अब शांति के साथ अपने प्राण छोड़ सकूंगा। लेकिन मेरी मृत्यु का समाचार मेरे भाइयों—आल्हा-ऊदल, को जरूर बता देना। जब वे मेरा हाल सुनेंगे तो जरूर ही कन्नौज से यहां आयेंगे। जबतक वे आ नहीं जायंगे मेरे प्राण शरीर में अटके रहेंगे। यह कहकर ब्रह्मा बेहोश हो गया।

इधर मलखान अभी तक महोबा में ही रहता था, क्योंकि राजा परमाल ने उसे देशनिकाले का दंड नहीं दिया था। मलखान के राज्य की सीमा पृथ्वीराज के राज्य की हद से मिलती थी। सीमा पर मलखान ने सिरसागढ़ नाम का एक किला बनवाया। यह किला माहिल की आंखों में बहुत गड़ा। वह मौका देखकर पृथ्वीराज के पास पहुंचा और बोला "मलखान अपनी ताकत बढ़ाता जा रहा है। आप जबतक उसे हरा नहीं देंगे, महोबा पर विजय न पा सकेंगे।" यह बात पृथ्वीराज को ठीक मालूम हुई और वह अपनी सेना सजाकर सिरसागढ़ पर चढ़ आया। उसने मलखान से

कहला भेजा कि या तो किला गिरवा दो या आकर युद्ध करो। मलखान ने जवाब दिया कि हमने क़िला आपकी सीमा में तो बनवाया नहीं है, आप बेकार झगड़ते हैं। लेकिन पृथ्वीराज न माना। उसके सेनापति चौड़ा ने सिरसागढ़ पर धावा बोल दिया। मलखान ने युद्ध में चौड़ा को हरा दिया। यही नहीं, उसने पृथ्वीराज को भी इस तरह घेरा कि उसे हार माननी पड़ी। तब पृथ्वीराज ने कहा, "मलखान, मैं अपनी हार मानता हूं। तुम अब घोड़े पर बैठकर अपनी विजय की घोषणा कर दो, ताकि दोनों तरफ के लोग यह जान जायं कि पृथ्वीराज चौहान इस लड़ाई में हार गया है।" पृथ्वीराज की बातों में आकर मलखान अपने घोड़े पर सवार होकर आकाश में उड़ गया और उसने ऊपर जाकर जैसे ही अपनी जीत का ऐलान किया वैसे ही पृथ्वीराज ने उसकी आवाज़ पर शब्द-भेदी बाण चला दिया। देवी का वरदान पाकर मलखान का सारा शरीर तो वज्र का हो गया था, लेकिन उसके तलवे कमजोर रह गये थे। पृथ्वीराज का बाण मलखान के तलवों को बेधता हुआ उसके शरीर में धंस गया और वह उसी समय बेहोश हो गया। घोड़ा अपने मालिक के शरीर को लिये-लिये रानी गजमोतन के पास पहुंचा। यह दृश्य देखकर सारे सिरसागढ़

में हा-हाकार मच गया।

जब ये सारे समाचार आल्हा-ऊदल को कन्नौज में मिले तो उन्हें बड़ा दुःख हुआ, पर उन्हें तो देश-निकाला मिला हुआ था। उनका स्वाभिमान उनको महोबे की सहायता करने से रोक रहा था।

इसलिए वे छिपकर सिरसागढ़ गये। वहां पहुंचने पर उन्होंने रानी गजमोतन के सती होने का समाचार सुना। फिर आल्हा-ऊदल दिल्ली में बेला के पास गये और उन्होंने घायल ब्रह्मा को देखा। अपने भाइयों को देखकर ब्रह्मा के मुख पर आनंद की लहर दौड़ गई। बेला ने ऊदल से कहा कि मैं अपने पति को लेकर महोबे जाऊंगी, और वहां अपने सास-ससुर के पैर छुऊंगी। ऊदल बोला, "तुम कोई चिंता न करो। जबतक हम दोनों भाई जिंदा हैं, तुम जैसा कहोगी, वैसा ही होगा।"

यह सुनते ही बेला सोलह शृंगार करके घायल ब्रह्मा के साथ पालकी में बैठी और पृथ्वीराज की सेना से लड़ते-भिड़ते हुए आल्हा-ऊदल ब्रह्मा की पालकी लेकर महोबे की तरफ बढ़े। लेकिन ब्रह्मा की ताकत कम होती जाती थी। जब महोबा थोड़ी ही दूर रह गया, तो जीतापुर नामक जगह पर ब्रह्मा ने अपने प्राण त्याग दिये। बेला ने कहा मैं तो यहींपर सती होऊंगी।

पालकी उसी जगह रखवा दी गई । पहले बेला ने महोबा जाकर अपने सास-सुसर के पैर छुए, फिर वापस आकर उसी जगह पर सती हो गई। आल्हा-ऊदल ने उनकी याद में एक स्तम्भ बनाया, जिसे 'जेतखम्ब' कहते हैं । आगे चलकर पृथ्वीराज और बनाफरों की लड़ाई यहींपर हुई । बेला के सती हो जाने के बाद आल्हा-ऊदल फिर कन्नौज वापस चले गये ।

महोबे का राज्य बिल्कुल कमज़ोर पड़ गया था, क्योंकि मलखान और ब्रह्मा मारे जा चुके थे। महोबा पर विजय पाने का यह अच्छा मौका देखकर पृथ्वी-राज ने माहिल की सलाह से महोबा को फिर घेर लिया। माहिल ने अपनी बहन मल्हना से कहा कि पृथ्वीराज को अगर मांगी हुई सारी चीजें न मिलेंगी तो महोबा को लूट लेंगे । इसलिए बताओ कि अब क्या किया जाय ? रानी मल्हना बड़ी चिंतित हुई। उसने कहा कि पृथ्वीराज ने आज महोबा को सूना पाकर हमें दबाना चाहा है। यह कोई बहादुरों का काम नहीं है । उनसे जाकर कहो कि हमें थोड़ी-सी मोहलत दें । हम उनका स्वागत करने और उनकी मनचाही करने के लिए एक महीने का समय चाहते हैं । पृथ्वीराज से यह बात कही गई तो उसने मोह-लत देना स्वीकार कर लिया ।

राजा परमाल ने जगनिक भाट को कन्नौज भेजा कि जाकर आल्हा-ऊदल को बुला लाओ। रानी मल्हना ने जगनिक से कहा जाकर ऊदल से कहना कि तुमको मल्हना नें अपनी छाती का दूध पिलाकर पाला था, ऐसे में काम न आओगे तो फिर कब आओगे। आज महोबे पर मुसीबत आई हुई है और तुम वहां कन्नौज में बैठे हुए मज़े उड़ा रहे हो।

जब जगनिक भाट ने आल्हा से राजा परमाल का संदेशा कहा तो आल्हा क्रोधित होकर बोला, "हम तो महोबे कभी नहीं जायंगे। हमें क्या याद नहीं है कि परमाल ने हमें किस तरह महोबे से निकाला था। पृथ्वीराज भले ही महोबे को बरबाद करदे, हमें कोई मतलब नहीं। हमारा घर तो अब कन्नौज है।" देवलदेवी ने जब आल्हा को यह कहते सुना तो उसे बहुत ग्लानि हुई। उसने आल्हा से कहा, "तुम्हें अपने आपको क्षत्रिय कहते शर्म नहीं आती। तुम्हारी जन्मभूमि आज संकट में है और तुम कायरों की तरह मुंह छिपाकर यहां बैठे हुए इस तरह की बातें कर रहे हो।"

मां के मुंह से इस तरह की फटकार सुनकर आल्हा-ऊदल चेत गए। उन्हें अपने धर्म का भान हुआ और उन्होंने राजा जयचंद से महोबा जाने के लिए छुट्टी

मांगी। जयचंद ने उन्हें छुट्टी तो दी ही, उनके साथ कन्नौज की सेना भी कर दी। रास्ते में और भी कई रियासतों को हराकर आल्हा-ऊदल अपनी सेना के

आल्हा-ऊदल ने रानी मल्हना के चरन छुए ।

साथ महोबे पहुंचे और रानी मल्हना के चरन छूकर बोले, "मां, अब पृथ्वीराज को आने दो। हम महोबा की रक्षा के लिए तैयार हैं।"

नियत समय पर पृथ्वीराज के पास युद्ध का न्यौता भेज दिया गया और 'जेतखम्ब' के पास जीता-पुर नामक जगह युद्ध के लिए तय करदी गई। यह युद्ध कई महीनों तक चला और उसमें तमाम राजाओं

की सेनाओं ने भाग लिया। दोनों तरफ के बहुत-से वीर मारे गये। महोबा के पक्ष के ढेवा, लाखन, मीरा ताल्हन आदि खेत रहे; और धांदू, संयमराय तथा चामुंडाराय आदि पृथ्वीराज के बहुतेरे सामंत भी मारे गये। युद्ध के आखिरी दिन जब इंदल और ऊदल भी मार डाले गये तो आल्हा ने अपना सर्वसंहारक अस्त्र उठाया। उसी समय आल्हा के गुरू बाबा अमरनाथ लड़ाई के मैदान में प्रगट हुए और बोले, "आल्हा तू किसलिए सारे संसार का संहार करने जा रहा है! देख, तेरे जितने भी सगे-संबंधी थे, सब-के-सब मारे जा चुके हैं।" यह देखकर आल्हा ने लड़ाई के मैदान पर अपनी निगाह डाली तो देखा कि चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ है। बनाफरों की सेना ख़त्म हो चुकी है और पृथ्वीराज की सेना के जवान या तो मारे गये हैं या आखिरी सांस ले रहे हैं, यहांतक कि स्वयं पृथ्वीराज भी घायल और बेहोश होकर सामने पड़ा हुआ है।

यह दृश्य देखकर आल्हा के मन में वैराग्य जागा। उसने अपना धनुष तोड़कर फेंक दिया और लड़ाई के मैदान को छोड़कर चला गया। कुछ देर बाद जब पृथ्वीराज की मूर्च्छा टूटी और अपने चारों ओर विनाश-ही-विनाश देखा तो उसे भी बड़ी घबराहट

हुई। अपनी बची-खुची सेना को लेकर वह दिल्ली वापस चला गया।

कहते हैं कि लड़ाई के मैदान में वैराग्य पैदा होने के बाद आल्हा तप करने के लिए कजरी बन में चला गया। यह भी कहा जाता है कि वह आज भी वहीं मौजूद है।

आल्हा के कुछ नमूने

सदा तोरंइयां ना बन फूलें, यारौं सदा न सावन होय।
सदा न माता उर मां राखै, यारौ सदा न जीवै कोय।।

... ...

आल्हा गवैया जुग-जुग जीवै औ' सुनवैया अमर ह्वै जाय।
जेहिके दुवारै आल्हा बाजै, तहिका बढ़ै बंस-परिवारु।

... ...

तोप बिजुलिया अष्टधातु की तोपैं नलकी दई सजाय।
देस उड़ानी बुर्ज गिरानी पर्वत तोड़ किये तैयार।।
किला ढहानी गर्भ गिरानी भैरों तोप लच्छमन क्यार।
तोप भवानी और कालिका तोप संकटा लियो निकार।।

... ...

गोली दौरि रही लोहुन मां मानौ सर्प रहे भन्नाय।
नचे बेंदुला ताके ऊपर सबसे कहैं उदयसिंह राय।।
तुम सब नौकर ना महुबे के तुम सब लागौ भाय हमार।
लाज राखिहौ गढ़ महुबे की ना तुम रखिहौ पांव पिछार।
प्रान पियारो जौ काहू को लेवै तलब और घर जांय।
साथ हमारे सोई आवैं जो लोहे के चने चबांय।।

... ...

काली बदरिया बहिनी लागौं, कौंधा लागौ बिरन हमार।
आजु बरसजाओ मोरे कनउजमां, कन्ता एक रैन रहिजांय॥

... ...

पीठि ठोंकि के ता ऊदल की रानी मल्हना बोलन लागि।
बेटा, धरम सुनो खेतन के ताते तुमको देउं जनाय॥
जो भागे ताको नहिं मरिहौ, ना निरबल पै करिहौ वार।
हाथ न डरिहौ तुम तिरिया पर, बूड़े छत्री धरम तुम्हार॥
देय दोहाई, ता नहिं मारौ जाके पास नहीं तरवार।
यहि सब नीति कही खेतन की या सब मनिहौ कहा हमार॥

... ...

बारह बरस तो कुत्ता जीवै, सोलह बरसहिं जियै सियार।
बरस अठारह छत्री जीवै, आगे जीवै को धिक्कार॥

●

सबेरे की रोशनी

: १ :

उत्तर लेबनान के एक गांव में शेख़ अब्बास नाम का एक बड़ा ज़मींदार रहता था। वह अपने को उस गांव का मालिक ही समझता था। जब वह किसानों से बातें करता तब वे दीनता के साथ सिर झुका लेते और जब वह गुस्से में आता तो वे डर के मारे कांप उठते। उसकी शकल देखते ही वे भाग जाते। अगर वह किसीके गाल पर तमाचा मार देता तो वह आदमी चुप खड़ा रहता और सोचता कि यह मार आसमान से आ पड़ी है। अगर वह किसीको देखकर तनिक मुस्कराता तो सब लोग उस आदमी को बधाई देते।

ये गरीब लोग शेख़ अब्बास के सामने सिर झुकाते थे—इसलिए नहीं कि वे कमजोर थे और शेख़ ताकतवर था, बल्कि इसलिए कि वे कंगाल थे और उन्हें शेख़ की जरूरत थी, क्योंकि जिस भूमि में वे खेती-बाड़ी करते थे और जिन मकानों में रहते थे, वे सब शेख़ की जायदाद थी। जी-तोड़ मेहनत करने पर भी उन्हें इतना भी अनाज नहीं मिल पाता था जो उन्हें भूख के गढ़ों से

निकाल सके। अधिकतर किसान तो जाड़ा बीतने से पहले ही रोटी तक को मुहताज हो जाते थे और एक-एक करके शेख़ के पास जाकर रोना-धोना शुरू कर देते थे, ताकि उससे एक दिनार या गेहूं की एक टोकरी कर्ज मिल सके। शेख़ उनकी मांग को खुशी से मंज़ूर कर लेता, क्योंकि वह जानता था कि फसल के समय एक दिनार की दो दिनार और गेहूं की एक टोकरी की दो टोकरियां बन जायंगी। इस तरह वे शेख़ अब्बास के कर्ज के नीचे दबे हुए थे।

जाड़े का मौसम आया। बरफ गिरने लगी। देहात के लोग शेख़ अब्बास के गोदामों को अनाजों से और मटकों को अंगूर के रस से भरकर घरों में बैठ गये।

रात हो गई थी। तूफानी हवा बरफ से लदे हुए बड़े-बड़े पहाड़ों से बरफ को उड़ा-उड़ाकर नीचे फेंकने लगी।

इस भयानक रात में बाईस बरस का एक नवयुवक कज्रहिया के गिरजाघर से एक कठिन रास्ता पारकर शेख़ अब्बास के गांव को जा रहा था। कज्रहिया का गिरजा लेबनान का सबसे अधिक प्रसिद्ध और धनवान गिरजा है।

---

[१] कज्रहिया सरियानी (सीरियन) शब्द है, जिसका अर्थ है 'जीवन का स्वर्ग।'

सर्दी नवयुवक के जोड़ों को ऐंठ रही थी। भूख और डर ने उसकी ताकत को खत्म कर दिया था। उसकी काली पोशाक बरफ़ से ढकी हुई थी, मानों उसने कफ़न पहन रखा हो। वह आगे की ओर बढ़ता तो हवा ऐसे ज़ोर से धक्का लगाती, मानो वह उसे

जीवन के बंधन में देखना नहीं चाहती थी। वह बेचारा गिर पड़ता और फिर उठ जाता।

नवयुवक चलता गया और मौत भी उसके पीछे-पीछे हो ली। अंत में उसकी सारी ताकत चुक गई। उसकी सुध-बुध कम होती गई। उसकी नसों का लहू जम गया और वह बरफ़ पर गिर पड़ा।

उसके शरीर में जीवन का केवल एक ही निशान

बाकी था, और वह था उसका रह-रहकर चिल्लाना।

इस गांव की उत्तर की ओर खेतों के बीच एक छोटे-से मकान में राहील नाम की एक स्त्री अपनी कोई अठारह साल की बेटी मरियम के साथ रहती थी। यह स्त्री समआन नामक एक आदमी की बेवा थी, जो पांच साल हुए जंगल में मरा पाया गया था और जिसके हत्यारे का पता आजतक नहीं लगा था।

अपनी ही मेहनत से वह रोज़ी कमाती थी। उसकी बेटी मरियम खूबसूरत थी और घर के काम-काज में अपनी मां का हाथ बंटाती थी।

उस भयावनी रात में राहील और मरियम अंगीठी के पास बैठी थीं। आधी रात बीत चुकी थी। अब वे सोने जा रही थीं कि इतने में मरियम को खिड़की में से कोई आवाज़ सुनाई दी। उसने मां से पूछा, "अम्मा, क्या तुमने सुना? मुझे लगता है, बाहर कोई कराह रहा है।"

राहील उठकर खिड़की के पास गई और बोली, "हां, मुझे भी आवाज़ सुनाई दे रही है। आओ, दरवाज़ा खोलकर बाहर जायं और उसकी तलाश करें!" इतना कहकर राहील बाहर निकल गई। मरियम दरवाज़े में ही खड़ी रही।

राहील थोड़ी दूर गई होगी कि इतने में उसने

अपने सामने एक आदमी को बरफ़ पर बेहोश पड़ा पाया। उसने आगे बढ़कर उसके कपड़ों से बरफ़ को झाड़ा और उसका सिर अपनी गोद में रखकर वह उसकी नाड़ी और दिल की धड़कन देखने लगी। फिर उसने जोर से आवाज दी।

मरियम घर से निकली और डर तथा जाड़े से कांपती हुई उस स्थान पर पहुंच गई। दोनों ने नौजवान को उठा लिया और उसे लेकर मकान पर पहुंच गईं। उन्होंने उस युवक को अंगीठी के पास लिटा दिया। मां उसके हाथ-पांव मलने लगी और बेटी अपने कपड़े से उसके भीगे हुए बालों को पोंछने लगी। कुछ मिनट में उस युवक के शरीर में हरकत हुई और उसकी आंखों में जान आ गई। मरियम ने उसके गीले जूते और भीगा लबादा उतारते हुए कहा, "देखो मां, इसकी पोशाक जोगियों की-सी है।"

राहील ने अंगीठी में सूखी लकड़ी डालते हुए कहा, "अजीब बात है! ऐसी भयावनी रात में तो जोगी या पादरी मठ से नहीं निकला करते! इस दुखी आदमी को किस बात ने मजबूर किया होगा कि वह अपनी जान खतरे में डाले?"

लड़की बोली, "लेकिन इसके दाढ़ी तो नहीं है। जोगियों के तो घनी दाढ़ी होती है!"

मां बोली, "बेटी, इसके पांव मलो।"

इसके बाद मरियम पासवाली कोठरी में से एक प्याले में थोड़ी-सी शराब लाई और उस युवक को पिलाई। तब उस युवक ने उसकी तरफ़ देखकर कहा, "भगवान् तुम्हारा भला करे!"

फिर राहील दो रोटियां एक रकाबी में रखकर
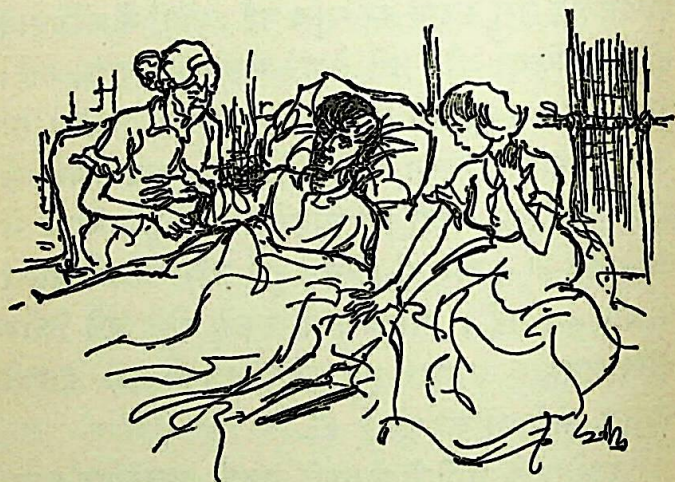
लाई और युवक के पास बैठकर उसके मुंह में इस तरह कौर देने लगी जैसे मां अपने बेटे को खिलाती है। जब वह काफी खा चुका तो बोला, "आदमी के हाथों ने मुझे इस हालत में डाला, और आदमी के ही हाथों ने मुझे बरबादी से बचा लिया।"

राहील ने ममताभरी आवाज़ में पूछा, "ए भाई, तुमपर ऐसी क्या गुजरी कि जिससे तुम्हें इस भयावनी रात में जोगियों के मठ को छोड़ना पड़ा ?"

नौजवान ने आह भरकर कहा, "मैं मठ से ज़बरदस्ती निकाल दिया गया।"

राहील ने डरी आवाज़ में पूछा, "निकाल दिया गया ?"

"हां, मुझे मठ से निकाल दिया गया, क्योंकि मुझे दुखियों और गरीबों का माल खाने से नफ़रत हो गई थी।"

तब राहील ने प्यार से पूछा, "ए भाई, तुम्हारे मां-बाप कहां हैं ?"

युवक ने दर्दभरी आवाज़ में उत्तर दिया, "मेरे न बाप है, न मां-बहन और न कोई ऐसी जगह, जहां मैं अपना सिर छिपा सकूं !"

नौजवान ने अपना सिर उठाया और कहना शुरू किया, "सात साल की उम्र में ही मेरे मां-बाप गुजर गये। गांव का पादरी मुझे कज़हिया के मठ में ले गया। वहां मुझे गायों का चरवाहा बनाया गया। जब मैं पंद्रह बरस का हुआ तब उन्होंने मुझे यह मोटी और काली पोशाक पहना दी और कहा, "भगवान् की क़सम खाकर अहद करो कि तुम अपने-आपको गरीबी,

हुक्म मानने और संयम के लिए निछावर कर दोगे।"
उनके कहने का मतलब ध्यान में आने से पहले ही मैंने उनके शब्दों को दुहराया। मेरा नाम ख़लील था और जब मैं जोगी बना तब उन्होंने मेरा नाम बिरादर मुबारक रख दिया; मगर उन्होंने मुझे अपना भाई न बनाया। वे बड़े अच्छे-अच्छे खाने खाते थे, मगर मुझे सूखी रोटियां और बासी सब्जी खिलाते थे। मुझे यह बुरा लगता था और मैं उस पर सोचता रहता था।

"आखिर एक दिन हिम्मत करके मैं मठ के जोगियों के पास गया और बोला, 'हम गरीबों और दुखियों के दान से फायदा क्यों उठाते हैं ? हम बेकार बैठकर क्यों ऐश उड़ाते हैं ? आओ, इस मठ की यह बड़ी खेती उन गरीब देहातियों में बांट दें और उनका जो माल हम उनसे ले चुके हैं, उनकी जेबों में डाल दें। हम उन कमजोर लोगों की सेवा करें, जिहोंने हमें ताक़तवर बनाया है और उन गांवों की तरक्की करें, जिनके दान ने हमें धनवान् बना दिया है।'

"जब मेरी बात खत्म हुई तो जोगियों में से एक आगे बढ़ा और दांत पीसकर बोला, 'ए मरियल आदमी, तेरी इतनी जुर्रत!' फिर दूसरा बोला, 'शैतान, तू अभी इसका नतीजा भुगतेगा!'

"इसके बाद उन्होंने बड़े पादरी से शिकायत की। उसने मुझे बुलाकर एक माह तक जेलखाने में रखने का हुक्म दिया। एक महीना मैं उस क़ब्र में पड़ा रहा, जहां मुझे रोशनी भी दिखाई नहीं दी। महीना बीत गया। मैं जेलख़ाने से बाहर निकला, मगर वहां की तकलीफ़ें मेरी हिम्मत को पस्त नहीं कर सकीं। आज शाम को मैंने उन लोगों को इंजील से ये फिक़रे पढ़ सुनाये—उसने एक समूह से, जो उसका यकीन पाने के लिए निकला था, कहा—'ए सांप की औलादो, आनेवाली आफ़त से डरो और संयम का मीठा फल पैदा करो! तुम अपने दिलों में कहते हो कि हम हज़रत इब्राहीम की औलाद हैं; लेकिन मैं तुमसे कहता हूं कि भगवान इस पत्थर से भी इब्राहीम की संतान पैदा कर सकता है। और अब कुल्हाड़ा पेड़ की जड़ काट चुका है और जो पेड़ अच्छे फल नहीं देता उसे आग में जला दिया जाता है।' लोगों ने पूछा, 'अब हम क्या करें?' उसने उत्तर दिया, 'जिसके पास कपड़े हैं, वह उन्हें उस आदमी को दे दे जिसके पास नहीं हैं, और जिसके पास खाना है, वह उसे दे दे, जो भूखा है।'

"मेरे होठों से इन शब्दों का निकलना था कि एक ने मेरे मुंह पर बड़े ज़ोर से तमाचा मारा; दूसरे

ने मुझे पांव से ठोकरें मारीं; तीसरे ने मेरे हाथ से इंजील छीन ली और चौथे ने बड़े पादरी को पुकारा। बड़ा पादरी जल्दी से आया और जब उसने सारी बातें सुनीं तो उसकी आंखें लाल हो गईं। वह गुस्से

से कांपने लगा और गरजती हुई आवाज़ में बोला, "इस बदमाश जोगी को पकड़ लो और मठ से निकाल दो, ताकि बाहर की आफतें इसे अच्छा सबक़ सिखा दें!'

"जोगियों ने मुझे तुरन्त पकड़ लिया और मुझे मठ के बाहर धकेल दिया।

"इस तरह जोगियों और पादरियों ने मुझे मौत के मुंह में दे दिया, मगर बरफ़ और आंधी के पीछे से एक ताकत ने मेरी पुकार को सुना और आपको मेरे पास भेजा, ताकि आप मुझे मरने से बचा लें!"

ख़लील की कहानी सुनकर राहील बोली, "भगवान् जिसे सचाई के रास्ते में मदद देता है, उसे न जुल्म खत्म कर सकते हैं और न आंधी और बरफ़ मार सकते हैं।"

मरियम ने आह भरकर कहा, "आंधी व बरफ़ फूलों को बरबाद कर सकते हैं; लेकिन बीज नहीं मर सकते!"

इस हमदर्दी से ख़लील का पीला चेहरा चमक उठा। कुछ ही मिनट में उसकी आंखें मुंद गईं और वह इस तरह सो गया जैसे बच्चा मां का दूध पीकर सो जाता है। राहील और मरियम भी अपने-अपने बिस्तरों पर जाकर सो गईं।

: २ :

दो हफ़्ते बीत गये। ख़लील ने तीन बार कोशिश की कि वह समुद्र के किनारे की राह ले, मगर राहील

ने प्यार से उसे रोककर कहा, "देखो भाई, तुम अब कहीं मत जाओ, यहीं रहो; क्योंकि जो रोटियां दो आदमियों का पेट भरती हैं, वे तीन के लिए काफ़ी होती हैं। भैया, हम ग़रीब ज़रूर हैं, मगर भगवान् की दुआ से उसी तरह जीते हैं, जैसे दूसरे आदमी !"

मरियम भी अपनी खामोश आहों से अपना प्यार जाहिर करती थी।

एक दिन हिम्मत करके उसने ख़लील से कहा, "तुम इसी गांव में क्यों नहीं रहते ? क्या यहां की जिंदगी दूर-दूर के उजाड़ परदेस से अच्छी नहीं है ?"

उसके शब्दों की कोमलता और स्वर के संगीत से व्याकुल होकर ख़लील बोला, "इस गांव के लोग पसंद न करेंगे कि पादरियों के मठ से निकाला गया आदमी उनका पड़ोसी बने। अगर मैं इस गांव में रह गया और मैंने यहां के लोगों से कहा, 'आओ भाइयो, अपनी मर्जी के मुताबिक प्रार्थना करें' न कि इस तरह जिस तरह जोगी और पादरी चाहते हैं, क्योंकि भगवान की यह मर्जी नहीं हो सकती कि वह ऐसे मूर्खों का देवता बने जो ईश्वर को छोड़ औरों के पीछे चलते हैं' तो ये लोग मुझे काफिर ठहरायंगे और कहेंगे कि यह आदमी उस हुकूमत से बैर रखता है, जो भगवान ने पादरियों को दी

है। ··· फिर भी मरियम ! इस गांव में एक ऐसा जादू है, जिसने मुझे जीत लिया है । मैं इस गांव में एक बड़ा अच्छा फूल देखता हूं, जो कांटों में पड़ा है। क्या मैं इस फूल को छोड़कर जा सकता हूं ? नहीं, कभी नहीं !"

मगर ख़लील की क़िस्मत ने उसे ज्यादा दिन तक चैन से नहीं रहने दिया।

उस गांव के मालिक शेख़ अब्बास की पादरियों से गहरी दोस्ती थी। एक दिन उस गांव का पादरी इलियास शेख़ अब्बास के पास गया और बोला, "पादरियों ने एक बदमाश बाग़ी को मठ से निकाल दिया था। वह काफ़िर अब दो हफ़्तों से इस गांव में आया हुआ है और समआन की बेवा राहील के घर में रहता है। हमारा फर्ज है कि हम भी उसे अपने गांव से निकाल बाहर कर दें !"

अब्बास ने पूछा, "क्या हमारे लिए यह मुनासिब न होगा कि हम उसे यहीं रहने दें और अपने अंगूर के बागों का रखवाला या ढोरों का चरवाहा बना लें?"

पादरी बोला, "अगर यह आदमी काम करने-वाला होता तो वे पादरी उसे क्यों निकाल देते, जिनकी खेती बहुत बड़ी है और जिनके पास बेशुमार ढोर हैं?" और फिर उसने वह सारा किस्सा उसे सुनाया जो उसने मठ के पादरियों से सुना था। सुन कर शेख़ अब्बास गुस्से से लाल-पीला होगया। उसने ज़ोर से चिल्लाकर अपने नौकरों को आवाज़ दी और कहा, "बेवा राहील के घर में एक आदमी है, जिसने पादरियों का लिबास पहन रखा है। जाओ, उसकी मुश्कें कसकर यहां ले आओ। और अगर वह औरत किसी तरह रुकावट डाले तो उसे भी गिरफ्तार कर लो और उसके सिर के बालों को पकड़कर उसे बरफ़ में खींचते हुए ले आओ, क्योंकि बदमाश का मददगार भी बदमाश ही होता है।"

नौकर हुक्म बजा लाने के लिए तेज़ी से बाहर निकले।

: ३ :

राहील, मरियम और ख़लील एक चौकी के पास बैठे खाना खा रहे थे कि इतने में दरवाज़ा खुला और

शेख़ अब्बास के नौकर अंदर आये। राहील डर गई और मरियम ने एक चीख़ मारी, मगर ख़लील खामोश था, क्योंकि उसने उनके आने का सबब जान लिया था। एक नौकर आगे बढ़ा और ख़लील के कंधे पर हाथ रखकर बोला, "पादरियों के मठ से निकाले हुए नौजवान तुम्हीं हो ?"

ख़लील ने जवाब दिया, "जी हां, मैं ही हूं। क्यों, क्या चाहते हो ?"

नौकर ने कहा, "हम चाहते हैं कि तुम्हारी मुश्कें कसकर तुम्हें शेख़ अब्बास के मकान पर ले चलें और अगर तुम कुछ आनाकानी करो तो तुम्हें मरे हुए बकरे की तरह घसीटते हुए ले जायं।"

राहील का चेहरा पीला पड़ गया। उसने कांपती हुई आवाज़ में पूछा, "इसका क्या कसूर है, जिसकी वजह से शेख़ अब्बास ने इसे बुलाया है ?"

नौकर मारे ग़ुस्से के चिल्ला उठा, "क्या इस गांव में कोई ऐसी औरत भी हो सकती है, जो शेख़ अब्बास की इच्छा के खिलाफ़ जाय ?"

यह कहकर उसने एक मोटी रस्सी ख़लील की मुश्कें कसने को निकाली। ख़लील उठकर खड़ा हो गया। उसके होठों पर मुस्कराहट थी। उसने उन नौकरों से कहा, "दोस्तो, मुझे तुम्हारी हालत पर

अब्बास ने पूछा, "क्या हमारे लिए यह मुनासिब न होगा कि हम उसे यहीं रहने दें और अपने अंगूर के बागों का रखवाला या ढोरों का चरवाहा बना लें?"

पादरी बोला, "अगर यह आदमी काम करने-वाला होता तो वे पादरी उसे क्यों निकाल देते, जिनकी खेती बहुत बड़ी है और जिनके पास बेशुमार ढोर हैं?" और फिर उसने वह सारा किस्सा उसे सुनाया जो उसने मठ के पादरियों से सुना था। सुन कर शेख़ अब्बास गुस्से से लाल-पीला होगया। उसने ज़ोर से चिल्लाकर अपने नौकरों को आवाज़ दी और कहा, "बेवा राहील के घर में एक आदमी है, जिसने पादरियों का लिबास पहन रखा है। जाओ, उसकी मुश्कें कसकर यहां ले आओ। और अगर वह औरत किसी तरह रुकावट डाले तो उसे भी गिरफ्तार कर लो और उसके सिर के बालों को पकड़कर उसे बरफ़ में खींचते हुए ले आओ, क्योंकि बदमाश का मददगार भी बदमाश ही होता है।"

नौकर हुक्म बजा लाने के लिए तेज़ी से बाहर निकले।

: ३ :

राहील, मरियम और ख़लील एक चौकी के पास बैठे खाना खा रहे थे कि इतने में दरवाज़ा खुला और

शेख़ अब्बास के नौकर अंदर आये। राहील डर गई और मरियम ने एक चीख़ मारी, मगर ख़लील खामोश था, क्योंकि उसने उनके आने का सबब जान लिया था। एक नौकर आगे बढ़ा और ख़लील के कंधे पर हाथ रखकर बोला, "पादरियों के मठ से निकाले हुए नौजवान तुम्हीं हो ?"

ख़लील ने जवाब दिया, "जी हां, मैं ही हूं। क्यों, क्या चाहते हो ?"

नौकर ने कहा, "हम चाहते हैं कि तुम्हारी मुश्कें कसकर तुम्हें शेख़ अब्बास के मकान पर ले चलें और अगर तुम कुछ आनाकानी करो तो तुम्हें मरे हुए बकरे की तरह घसीटते हुए ले जायं।"

राहील का चेहरा पीला पड़ गया। उसने कांपती हुई आवाज़ में पूछा, "इसका क्या कसूर है, जिसकी वजह से शेख़ अब्बास ने इसे बुलाया है ?"

नौकर मारे ग़ुस्से के चिल्ला उठा, "क्या इस गांव में कोई ऐसी औरत भी हो सकती है, जो शेख़ अब्बास की इच्छा के खिलाफ़ जाय ?"

यह कहकर उसने एक मोटी रस्सी ख़लील की मुश्कें कसने को निकाली। ख़लील उठकर खड़ा हो गया। उसके होठों पर मुस्कराहट थी। उसने उन नौकरों से कहा, "दोस्तो, मुझे तुम्हारी हालत पर

तरस आता है। तुम एक ज़बरदस्त आदमी के हाथ में अंधे औज़ार की तरह हो। वह तुमपर ज़ुल्म करता है और तुम्हारे हाथों से कमज़ोरों को बरबाद कराता है। तुम्हारी लाचारी पर मुझे दुख है। आओ, मेरी मुश्कें कस लो और जो जी में आये करो!"

नौकरों ने ये बातें सुनीं तो उनकी आंखें पथरा गईं। मगर फौरन उन्हें याद आगया कि वे किस काम के लिए वहां आये हैं। आगे बढ़कर उन्होंने ख़लील की मुश्कें कस लीं और उसे पकड़े हुए चुपचाप बाहर निकले। राहील और मरियम भी उनके पीछे-पीछे चल दीं—उसी तरह जिस तरह यरूशलम की लड़कियां हज़रत ईसा मसीह के पीछे हो ली थीं, जबकि उन्हें क्रूस पर लटकाने के लिए ले जाया जा रहा था।

: ४ :

देहात में छोटी-बड़ी ख़बरें बहुत जल्दी फैल जाती हैं। शेख़ अब्बास के आदमियों ने ज्योंही ख़लील को गिरफ्तार किया, यह ख़बर गांव के लोगों में छूत की बीमारी की तरह फैल गई। वे अपने-अपने मकान छोड़कर बिखरे हुए सिपाहियों की तरह हर तरफ़ से तेज़ी के साथ भागे और जैसे ही नवयुवक को शेख़ के मकान में लाया गया, वह बड़ा

घर स्त्रियों, पुरुषों और बच्चों से भर गया। सब-के-सब उस काफ़िर की ओर आश्चर्य से देख रहे थे, जिसे पादरियों ने मठ से निकाल दिया था।

शेख़ अब्बास एक ऊंची गद्दी पर विराजमान था और उसके पास पादरी इलियास बैठा था। सामने किसान व नौकर-चाकर खड़े थे और बीच में ख़लील; जिसकी मुश्कें कसी हुई थीं, इस तरह अकड़ कर खड़ा था, जैसे गढ़ों के बीच में ऊंचा टीला।

शेख़ अब्बास ने ख़लील की ओर देखकर पूछा, "ए शख़्स, तेरा नाम क्या है?"

ख़लील ने उत्तर दिया, "मुझे ख़लील कहते हैं।"

शेख़ ने पूछा, "तुम्हारा ख़ानदान कौन-सा है? और तुम कहां के रहनेवाले हो?"

ख़लील ने उन किसानों की ओर देखा, जो उसकी तरफ़ नफ़रत से देख रहे थे और कहा, "ये दुखी-गरीब लोग ही मेरा ख़ानदान हैं और ये ही फैले हुए गांव मेरी मातृभूमि हैं।"

शेख़ अब्बास मुस्कराया और बोला, "तुम जिन लोगों के साथ अपना रिश्ता जोड़ते हो, वे तुम्हें सज़ा दिलाना चाहते हैं और जिन गांवों को तुम अपनी मातृ-भूमि बताते हो, वे नहीं चाहते कि तुम यहां चैन से रहो।"

खलील ने व्याकुल होकर उत्तर दिया, "नासमझ जातियां अपने शीलवान् बेटों को पकड़ कर ज़ुल्म करनेवालों की बेरहमी के हवाले कर देती हैं और बेइज़्ज़ती तथा दुर्दशा के गढ़ों में फंसे हुए गांव अपने प्यारे बेटों पर ज़ुल्म करते हैं। ये दीन-दुखी लोग, जिन्होंने आज मुझे रस्सों से जकड़कर तुम्हारे हवाले किया है, कल अपनी गर्दनें तुम्हारे हवाले कर चुके हैं।"

शेख़ ने ज़ोर से ठहाका मारकर कहा, "क्या तुम पादरियों के मठ में चरवाहे नहीं थे ? तो फिर तुमने अपने ढोरों को क्यों छोड़ दिया ? और तुम वहां से क्यों निकाले गये ?"

ख़लील ने उत्तर दिया, "मैं चरवाहा था, कसाई नहीं। मैं ढोरों को हरी-भरी चरागाहों में ले जाता था, सूखे पहाड़ों पर नहीं। अगर तुम इन ग़रीब आदमियों के साथ ऐसा ही सलूक करते तो तुम आज इन शानदार महलों के मालिक न होते और ये बेचारे अपने अंधेरे झोंपड़ों में भूखों न मरते।"

शेख़ के माथे पर ठंडे पसीने की बूंदें चमकने लगीं। लेकिन जल्दी ही वह सम्हल गया और उसने हाथ फैलाकर कहा, "तुम्हारी मुश्कें कसवाकर तुम्हें यहां इसलिए नहीं मंगाया गया है कि तुम्हारी

वाहियात बातें सुनें; बल्कि इसलिए कि एक बदमाश अपराधी की तरह तुम्हारी जांच की जाय। तुमपर जो जुर्म लगाये गये हैं, उनके बारे में तुम अपनी सफाई पेश करो या हमारे सामने झुककर दया की प्रार्थना करो। हम तुम्हें माफ़ कर देंगे और उसी तरह गायों का चरवाहा बना देंगे, जिस तरह तुम पादरियों के मठ में थे।"

ख़लील ने लापरवाही से जवाब दिया, "अपराधी का इन्साफ अपराधी नहीं किया करते और 'बदमाश काफ़िर' अपनी सफ़ाई दोषियों के सामने पेश नहीं किया करते !"

ये शब्द कहकर ख़लील ने उस बड़े मकान में जमा हुए लोगों पर नज़र दौड़ाई और कहा, "ए लोगों, तुम अपनी अंगीठियों की गरमी छोड़कर यह देखने आये हो कि किस तरह तुम्हारा बेटा और तुम्हारा भाई जकड़ा हुआ लाया गया है। तुम एक मुजरिम काफ़िर को अदालत के सामने खड़ा देखने आये हो। वह अपराधी मैं ही हूं। वह काफ़िर मैं ही हूं। तुम मेरी दलील सुनो और मेरे साथ रहम न करो, बल्कि इंसाफ करो, क्योंकि दया कमजोर और अपराधी लोगों के लिए होती है। बेकसूर आदमी तो इंसाफ चाहता है। मैं तुम्हारे इंसाफ के फैसले को स्वीकार

करता हूं, क्योंकि जनता की इच्छा भगवान की इच्छा होती है। अपने दिलों को खोलो और मेरी बातों को सुनो, फिर तुम्हारा विवेक जैसा कहे वैसा न्याय करो।"

"ए मर्दों, मेरा जुर्म यह है कि मैं तुम्हारी बरबादी की जानकारी और तुम्हारी गुलामी को महसूस करता हूं। और ए नारियो ! मेरा गुनाह यह है कि मेरे दिल में तुम्हारे लिए और तुम्हारे बच्चों के लिए हमदर्दी भरी हुई है। मित्रो, मैं तुममें से ही एक हूं। मैंने मठ में यह देखा कि तुम लोग अपने खेतों में बकरियों के उस रेवड़ की तरह हो, जिसके पीछे भेड़िया जा रहा है। मैं रास्ते के बीच में खड़ा होकर चीखने-चिल्लाने लगा। इसपर भेड़िये ने मुझपर हमला करके मुझे दूर भगा दिया, ताकि मेरे शोर-गुल से बकरियां भेड़िये को रात के अंधेरे में अकेला छोड़-कर इधर-उधर भाग न जायं।

"तुमने सुना है कि अल्लाताला ने हजरत आदम से कहा था कि मेहनत करके रोटी कमाओ। फिर शेख अब्बास वह रोटी क्यों खाता है, जिसमें तुम्हारे माथे का पसीना मिला हुआ है ? तुम बहुत बड़े और आली-शान महल बनाते हो, लेकिन तुम्हारे रहने के लिए झोंपड़ी के सिवा कुछ नहीं। क्या तुमने ईसामसीह का वह वचन नहीं सुना है, जो उन्होंने अपने शिष्यों से कहा

था—'जो कुछ दो, मुफ्त दो और जो कुछ लो, मुफ्त लो। घरों में सोना, चांदी और तांबा जमा न करो।' फिर यह पादरी और जोगी किस शिक्षा के अनुसार अपनी प्रार्थनाओं को चांदी-सोने के बदले में बेचते हैं ?"

ख़लील का चेहरा चमक उठा। उसने जान लिया कि सुननेवालों के हृदय में उनकी आत्मा जग रही है। उसकी आवाज़ पहले से ज्यादा ऊंची होगई। वह कहने लगा, "मेरे भाइयो, तुम अल्लाह के बेटे होकर यह कैसे क़बूल करते हो कि आदमी की गुलामी मंजूर की जाय ? ईसामसीह ने तुम्हें 'भाई' कहकर पुकारा था, फिर तुम अपने को शेख़ अब्बास के गुलाम क्यों कहलाते हो ?. . . . आज रात तुमने जो बातें मुझसे सुनीं, उन्हीं बातों के सबब से मैं मठ से निकाला गया। अब अगर तुम्हारे गांव का शेख़ और तुम्हारे गिरजा का पादरी मुझे सूली पर चढ़ा दे तो मुझे खुशी ही होगी।"

ख़लील की बातों ने लोगों के दिलों पर जादू का-सा असर किया। उनकी आंखों से परदे इस तरह हट गये जैसे एक अंधा आदमी अचानक देखने लग जाय। मगर शेख़ अब्बास और पादरी इलियास गुस्से के मारे कांप रहे थे। वे चाहते थे कि ख़लील को चुप करा दें; पर ऐसा नहीं कर सकते थे। आखिर शेख़ अब्बास खड़ा हो गया। उसने त्यौरी चढ़ाकर कठोर आवाज़ में लोगों

से कहा, "तुम्हें हो क्या गया है ? क्या तुम सुन नहीं रहे हो ? क्या तुम्हारे शरीर सुन्न हो गये हैं कि तुम इस काफिर को पकड़ने लायक नहीं रहे ?"

इतना कहकर शेख़ ने तलवार खींच ली और वह

ख़लील की ओर झपटा ताकि उसपर वार करे, मगर इतने में वहां जमा हुए लोगों में से एक ताक़तवर

आदमी आगे बढ़ा और बोला, "ए सरदार, अपनी तलवार को म्यान में डालो, वरना तलवार का बदला तलवार से लिया जायगा !"

शेख़ कांपने लगा। उसके हाथ से तलवार गिर गई। उसने चिल्लाकर कहा, "क्या एक कमज़ोर नौकर ईश्वर के समान अपने मालिक को रोक सकता है ?"

उस आदमी ने जवाब दिया, "ईमानदार नौकर बदमाशी और ज़ुल्म में अपने मालिक का मददगार नहीं होता।"

अब राहील को भी बोलने की हिम्मत हो गई। वह आगे बढ़ी और बोली, "इस आदमी ने अपनी बातों से हमारा ही दिल खोलकर रख दिया है। इसलिए अब जो आदमी बदमाशी करेगा वह सबका दुश्मन होगा।"

शेख ने दांत पीसते हुए कहा, "तू भी विद्रोह करती है, ए औरत ! क्या तू भूल गई कि आज से पांच बरस पहले जब तेरे शौहर ने मुझसे बगावत की थी तो उसका क्या नतीजा हुआ था ?"

यह सुनकर राहील को बहुत गुस्सा आया और दुख के मारे वह कांपने लगी। उसने लोगों की तरफ़ देखकर फ़रियाद की, "सुन रहे हैं आप ? यह हत्यारा गुस्से में आकर अपने गुनाह को क़बूल कर रहा

है। मेरे पति के हत्यारे का पता उस वक्त नहीं चल सका, क्योंकि वह तो इन दीवारों के पीछे छिपा हुआ था। भगवान ने अचानक हमें वह हत्यारा दिखा दिया है जिसने मुझे बेवा बनाया!"

राहील की इस बात से उस कमरे में सन्नाटा-सा छा गया। इतने में पादरी इलियास उठा और उसने कांपती हुई आवाज में नौकरों को हुक्म दिया, "इस औरत को गिरफ्तार कर लो, जो तुम्हारे मालिक पर झूठा इलज़ाम लगा रही है और इसे उस काफ़िर ख़लील के साथ क़ैदख़ाने में डाल दो। जो आदमी ऐसा करने से तुम्हें रोकेगा वह भी इनके अपराध में शामिल समझा जायगा और उनकी तरह उसे भी पाक गिरजा से निकाल दिया जायगा।"

लेकिन नौकर चुप रहे। उनके जमादार ने कहा, "हमने शेख़ अब्बास की नौकरी रोटी के टुकड़े के लिए की थी, पर हम उसके गुलाम नहीं हैं।" इतना कहकर उसने अपनी वर्दी उतारकर शेख़ अब्बास के सामने फेंक दी। दूसरे नौकरों ने भी वैसा ही किया और कहा, "अब हम इस ख़ूनी आदमी की नौकरी नहीं कर सकते!"

पादरी इलियास ने जब यह हालत देखी तो वह समझ गया कि झूठी ताक़त का जादू टूट चुका है।

इसलिए वह उस घड़ी को कोसता हुआ मकान से बाहर चला गया, जब ख़लील उस गांव में आया था।

इसी समय एक आदमी आगे बढ़ा और उसने ख़लील की मुश्कें खोल दीं और शेख़ अब्बास की ओर देखकर, जो कुर्सी पर पत्थर की तरह चुपचाप बैठा था, बोला, "इस नवयुवक ने हमारे अंधेरे दिलों को रोशन कर दिया है और इस बेवा ने हमपर एक ऐसा राज़ जाहिर कर दिया है जो पांच साल से छिपा हुआ था। हम तुम्हें तुम्हारे हाल पर छोड़ते हैं। कुदरत खुद ही तुमसे बदला लेगी।"

अचानक स्त्रियों और पुरुषों की यह आवाज़ उस बड़े मकान में गूंज उठी—"आओ, हम इस मकान से भाग चलें, जिसकी दीवारों पर पाप और बुराइयां लिखी हुई हैं।"

एक ने कहा, "हमें वही करना चाहिए जो ख़लील हमें बताये, क्योंकि वह हमारी ज़रूरतों को जानता है और हमारे दिलों को समझता है।"

दूसरे ने कहा, "हम सुल्तान से प्रार्थना करें कि वह खलील को शेख़ अब्बास की जगह गांव का सरदार बना दे!"

जब हर तरफ़ से अलग-अलग आवाज़ें आने लगीं तो ख़लील ने अपना हाथ उठाकर लोगों को चुप

कराया और कहा, "भाइयो, जल्दी न करो ! मैं प्रेम के नाम पर तुमसे यह चाहता हूं कि तुम सुल्तान के पास न जाओ, क्योंकि वह इंसाफ़ नहीं करेगा और न इस बात की उम्मीद रखो कि मैं इस गांव का सरदार बनूंगा, क्योंकि ईमानदार सेवक कभी नहीं चाहता कि वह एक छिन के लिए भी बदमाश सरदार बने। अगर तुम मुझसे प्रेम करते हो तो मुझे आज्ञा दो कि मैं तुम्हारे बीच रहकर तुम्हारे सुख-दुख का साझीदार बनूं और तुम्हें खेतों के सुधार और सुखों का रास्ता दिखाऊं।"

यह कहकर ख़लील उस मकान से निकला। सब लोग उसके पीछे-पीछे हो लिये। जब वे गिरजा के पास पहुंचे तो ख़लील एक पैगंबर की तरह वहां ठहर गया और लोगों से बोला, "भाइयो, आज रात हम अब्बास के घर पर इसलिए इकट्ठे हुए थे कि सुबह की रोशनी को देखें। वह रोशनी हमें दिखाई दी है। अब जाओ और अपने-अपने बिस्तरों पर जाकर सो जाओ !" और ख़लील राहील और मरियम के पीछे-पीछे उनके मकान चला गया। लोग अपने-अपने घर चले गये।

: ५ :

दो महीने बीत गये। ख़लील हर रोज गांववालों को उनके अधिकार और कर्तव्य समझाता रहता।

गांववाले उसकी बातें सुनकर सुख अनुभव करते और खुशी-खुशी अपनी खेती-बाड़ी का काम करते। इधर शेख़ अब्बास कुछ पागल-सा हो गया। वह अपने मकान में इस तरह घूमता-फिरता था जैसे पिंजरे के अंदर चीता।

आखिर एक दिन वह मर गया।

किसानों में उसकी मृत्यु के कारणों के संबंध में मतभेद था। कुछ कहते थे कि उसका दिमाग फिर गया था। कुछ का खयाल था कि उसने जिंदगी से मायूस और दुखी होकर जहर खा लिया, मगर जो स्त्रियां उसकी पत्नी को सांत्वना देने के लिए जाती थीं, वे वापस आकर बताती थीं कि शेख़ डर के मारे मर गया; क्योंकि राहील का मृत पति समआन आधी रात के समय खून में लथड़े हुए कपड़ों में उसे दिखाई देता था।

ख़लील और मरियम के बीच जो मुहब्बत पैदा हो गई थी, उसकी जानकारी जब गांववालों को हुई तो उन्हें बड़ी खुशी हुई और उन्होंने उनकी शादी बड़ी धूमधाम से करदी। अब ख़लील सचमुच उन्हींमें से एक बन गया था।

जब फ़सल की कटाई के दिन आये तो किसानों ने खेतों में जाकर अनाज इकट्ठा किया। चूंकि अब शेख़ अब्बास नहीं था, इसलिए किसानों ने अपने कोठे गेहूं, ज्वार और जैतून से भर लिये।

उन दिनों से लेकर आजतक उस गांव का हर आदमी सुख के साथ खेती-बाड़ी करता है और आनंद से अपनी मेहनत से पैदा किये बाग़ के फलों को जमा करता है। जमीन का मालिक वही है, जो उसमें खेती करता है।

आज इन घटनाओं को हुए आधी सदी बीत चुकी है। जब कोई बटोही उस रास्ते से गुजरता है तो वह उस गांव के लोगों की खूबियां देखकर दंग रह जाता है। वह देखता है कि मामूली झोंपड़ों की जगह सुंदर मकान बन गये हैं और उनके आसपास हरे-भरे खेत और लहलहाते बाग़ बहुत शोभा देते हैं।

अगर शेख अब्बास का इतिहास पूछें तो गांव का आदमी टूटे हुए एक पत्थर के पास ले जायगा, जिसके आसपास की दीवारें गिर चुकी हैं, और कहेगा--"यह है शेख़ अब्बास का आलीशान महल और यही है उसका इतिहास!" और अगर पूछें कि ख़लील का इतिहास क्या है तो वह अपना हाथ आकाश की ओर उठाकर कहेगा--"हमारा प्यारा खलील वहां रहता है, मगर उसकी कहानी हमारे पुरखों ने हमारे दिलों के पन्नों पर लिख रखी है, जिसे समय नहीं मिटा सकता।"

●

कालापानी

: १ :

हमारे देश में शायद ही कोई ऐसा आदमी हो जिसने कालापानी का नाम न सुना हो। अंडमान और निकोबार के द्वीप 'कालापानी' के नाम से मशहूर हैं। 'कालापानी' नाम शायद इसलिए पड़ा कि अंग्रेजी राज के जमाने में भारत के उन कैदियों को इन द्वीपों में भेजा जाता था, जिन्हें किसी बड़े अपराध में जिंदगी भर की, या पंद्रह-बीस साल की लंबी सजा दी जाती थी। घर-बार से हमेशा के लिए अलग करके यदि किसीको समुद्र के किसी टापू में बंद कर दिया जाय तो क्यों न वह अच्छे पानी को कालापानी समझने लग जायगा? इसीलिए 'कालापानी' की कहानी में बड़ी पीड़ा और दर्द छिपा हुआ है।

सन् १८५७ के गदर की कहानी हम सबको मालूम है। किस तरह उस गदर में हिंदू-मुसलमानों ने एक दिल से अंग्रेजी राज को देश से मिटाने के लिए कमर कसी थी। बच्चा-बच्चा जानता है कि झांसी की रानी लक्ष्मीबाई उस गदर में बड़ी वीरता से लड़ती हुई

शहीद हुई थीं। उस कहानी से कालापानी की कहानी का इतना अटूट संबंध है कि उसे जाने बिना हम कालापानी को नहीं जान सकते।

सन् १७८९ में आर्कीबाल्ड ब्लेअर नामक एक अंग्रेज कप्तान ने इन द्वीपों का पता लगाया था, मगर इन्हें आबाद करने की बात सोची गई वर्षों बाद, जब सन् १८५७ के गदर में अंग्रेजों से मात खाकर जिंदगी-कैद की सजा पाए हुए भारतीय देशभक्तों को ठिकाने लगाने के बारे में अंग्रेजों ने सोचना शुरू किया। इस तरह उन देशभक्त कैदियों के पहले जत्थे से इन द्वीपों को आबाद करना शुरू किया गया।

बाद में हर तरह के खतरनाक कैदी यहां लाए जाने लगे। कुछ समय उन्हें जेल में रखकर फिर खेती-बाड़ी और व्यापार के अलावा घर-बारी जिंदगी बिताने की सहूलियतें दी जाने लगीं। इस प्रकार बाकायदा एक 'नया समाज' बनाने की बुनियाद वहां डाली गई। सन् १८५७ से लेकर सन् १९४२ के शुरू तक हिंदुस्तान से खतरनाक कैदियों को वहां भेजा जाना जारी रहा। मगर उसके बाद जापानियों ने उन द्वीपों पर कब्जा करके इस सिलसिले को तोड़ दिया। जापानियों का कब्जा तीन साल तक रहा। इसी बीच नेताजी सुभाष-चंद्र बोस के नेतृत्व में इन द्वीपों में 'आजाद हिंद सरकार' भी बनी। जापानियों की हार के बाद कुछ समय

के लिए फिर से वहां अंग्रेजों का कब्जा हुआ। फिर १५ अगस्त १९४७ में भारत से अंग्रेजी राज खत्म होने के बाद ये सारे द्वीप 'स्वतंत्र भारत' के अंग बन गये और तबसे ये कैदियों के द्वीप न रहकर भारत के सभी नागरिकों के द्वीप बन गये हैं। अब वहां किसी कैदी को नहीं भेजा जाता। आजकल वहां पूर्वी बंगाल से उजड़े हुए हिंदू शरणार्थियों को बसाया जा रहा है।

इन द्वीपों की संख्या ढाई सौ से भी ज्यादा है। किसी द्वीप का रकबा एक-डेढ़ एकड़ का है तो किसी-किसी का हजारों एकड़ का। समुद्र के बीच में हरे-भरे जंगलों से लदे उन द्वीपों का दृश्य बड़ा सुहावना है। मोटरबोट या नाव पर सवार होकर उन छोटे-छोटे द्वीपों के दर्रे से गुजरते समय जंगली पेड़-पौधों से छन-छनकर आती हुई हवा की सुगंध से ऐसा लगता है, मानो हम किसी स्वर्ग में आ पहुंचे हैं।

कालापानी के द्वीप कलकत्ता या मद्रास के बंदरगाह से कोई आठ-सौ मील दूर हैं। जहाज पारी-पारी से इन दोनों बंदरगाहों से यात्री और सामान लेकर चलता है। समुद्र की लहरों पर दिन-रात लगातार चलता रहकर वह चौथे दिन कालापानी की राजधानी 'पोर्ट ब्लेअर' बंदरगाह में पहुंचता है। इन द्वीपों का पता लगानेवाले कप्तान ब्लेअर के नाम पर इस बंदरगाह का नाम 'पोर्ट ब्लेअर' रखा गया है।

सन् १९५० की फरवरी में मैंने वहां की यात्रा की थी। रेल की यात्रा से समुद्र की यात्रा में अधिक आराम मिला। कार्तिक से चैत्र तक समुद्र की लहरें कुछ शांत होने के कारण यात्रा में खूब आराम रहता है, लेकिन उसके बाद के छः महीनों में लहरों में तेजी आने के कारण जहाज इतना हिलता-डुलता है कि डेक और तीसरे दर्जे के यात्रियों का जी मिचलाने लगता है और उल्टियों के मारे मुसीबत हो जाती है।

फिर भी जहाज में आनंद खूब आता है। एकरस और अटूट चाल से समुद्र की नीली छाती को चीरकर अपने पीछे मानो सफेद सड़क बनाते, हुंकारते और दौड़ते हुए जहाज को देखने में बड़ा मजा आता है। सुबह से पहले जब सूरज समुद्र के काले पेट से एकाएक निकलकर अपनी लाल-लाल किरणों को उन चंचल लहरों पर बिखेर देता है तो वह दृश्य देखते ही बनता है। वह नजारा भी कम सुहावना नहीं होता, जब दोपहर को सूरज की किरणें लहरों पर चकमक-चकमक नाचती हुई चकाचौंध-सी पैदा करती हैं। फिर चांदनी रात में लहरों और चांदनी की आपसी आंख-मिचौनी भी कम सुहावनी नहीं होती।

चौथे दिन सुबह से ही हमें द्वीपों की झांकी मिलनी शुरू हो गई। वे दूर से समुद्र की रीढ़ की तरह उभरे हुए लग रहे थे। पोर्ट ब्लेअर के कुछ निकट होते ही

सामान-असबाब बांधने लगे और जब बंदरगाह के पास आये तो किनारे पर नारियल के बगीचे पत्ते हिला-हिलाकर जैसे हमारा स्वागत करने लगे। जहाज की
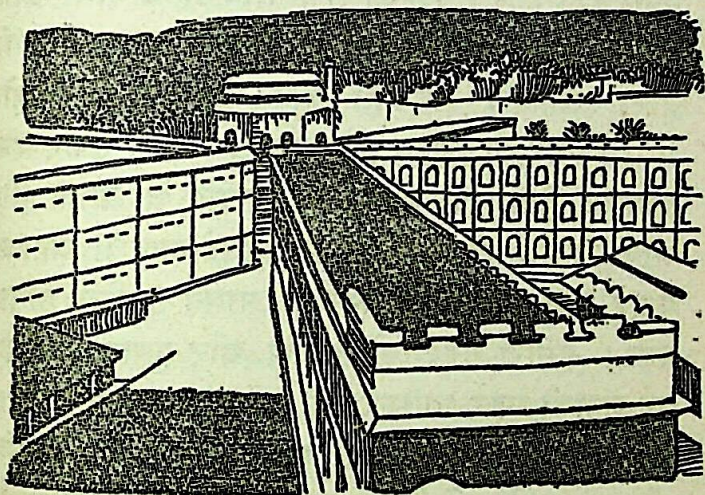
समुद्र के किनारे टीले पर बनी जेल की इमारत

चाल अब काफी धीमी पड़ गई। कुछ मिनट बाद ही जहाज उस जेल के किनारे से चलने लगा, जिसमें वर्षों पहले भारत और बर्मा से लाये गये कैदी बंद किये जाते थे। समुद्र के किनारे काफी ऊंचे टीले पर खड़े जेल की इमारत बड़ी रोबदार थी। जहाज जब बंदरगाह के बिल्कुल पास पहुंचा तो एकाएक किनारे से लगना आसान न था। कितनी पैंतरेबाजियों के बाद वह कहीं किनारे से लग पाया। किनारे पर लोगों की

भीड़ पहले से ही जमी हुई थी। लोग अपने सगे-संबंधियों को लेने वहां आये थे।

जहाज पर सवार होने से कम-से-कम चौदह दिन पहले हैजा और चेचक का टीका लिये बिना यात्रा नहीं की जा सकती। टीका लेने की डाक्टरी सनद साथ में होना चाहिए। कलकत्ता और मद्रास के बंदरगाहों में उस सनद को देखकर ही सरकारी डाक्टर सफर की इजाजत देता है। जहाज से उतरने के समय भी जांच-पड़ताल की वही मुसीबत सामने आई। जहाज पर ही हमें सरकारी डाक्टर के सामने हाजिर होना पड़ा। हमारी सनदों को देखकर और हमारी कलाई पर जहाजी मुहर लगाकर वह हमें पास करता गया।

कालापानी में सरकारी अफसरों को छोड़ किसी और को कुली नहीं मिलता। यदि मिलता है तो तभी जबकि किसी सरकारी अफसर से लाग-लगाव हो। जहाज पर ही पोर्ट ब्लेअर के एक व्यापारी से मेरा परिचय होगया था। इसलिए मैं पीठ पर सामान लादने की मुसीबत से बच गया। दूसरी मुसीबत थी सवारी की, क्योंकि सरकारी अफसरों की जीप या कार ही बंदरगाह तक आ सकती थी। किराये पर चलनेवाली बस को बंदरगाह से लगभग आधा मील दूर खड़ी होना पड़ता था। उस बस पर बड़ी भी थी। किसी तरह मुझे जगह मिल गई।

पोर्ट ब्लेअर की खास बस्ती और बाजार का नाम 'अबर्डीन' है, बंदरगाह से करीब तीन मील दूर। सूरज छिपने के बा में बाजार में आगया और एक धर्मशाला में अपना डेरा डाला।

: २ :

भारत के सभी हिस्सों, सभी धर्मों और जातियों के कैदी वहां भेजे जाते थे। जब घर-बारी जीवन बिताने की ओर सबका रुझान हुआ तो शादी-ब्याह की समस्या भी सामने आने लगी। शुरू-शुरू में कुछ वर्षों तक स्त्री-कैदी भी वहां भेजी जाती थीं। पुरुष और स्त्री कैदियों को एक-दूसरे से मिलने की आजादी दी जाने लगी। जब मन मिल गया तो वे बाकायदा शादी करके गृहस्थ बनने लगे। इस तरह रोटी-बेटी के रिश्ते में जात-पांत का खटराग अपने आप खतम होता गया। शादी के लिए एक खास जगह निश्चित की गई, जहां धीरे-धीरे 'शादीपुर' नामक एक गांव बस गया।

सारे कालापानी में कैदियों से बने समाज की आबादी अभी पच्चीस-तीस हजार से ज्यादा नहीं है, मगर इस थोड़ी-सी आबादी में हिंदू, मुसलमान, सिख, ईसाई और बौद्ध, सभी धर्मों के माननेवाले लोग हैं। इसलिए वहां मंदिर हैं, मस्जिदें हैं, सिखों के गुरुद्वारे, ईसाइयों के गिरजाघर और बौद्धों का एक फया भी है। मगर इतने मजहबों के होते हुए भी वहां धार्मिक

कट्टरता नहीं है। औरों की तो बात क्या, हिंदू-मुसलमानों में भी रोटी-बेटी का संबंध वहां चालू है। वहां मुसलमान भी बड़ी श्रद्धा से मंदिरों में जाकर चरणामृत और प्रसाद लिया करता है। एक बंगाली की शादी मद्रासिन से, मद्रासी की शादी मराठिन, गुजरातिन या पंजाबिन से और पंजाबी की शादी दूसरे सूबों की स्त्रियों से मजे में हो जाती है और इस आम रिवाज के कारण जातीयता और प्रांतीयता नाम की चीज वहां नहीं है। वे सभी अपनेको 'अंडमानी' कहने में गर्व अनुभव करते हैं। सबकी भाषा भी वहां एक है। स्त्री-पुरुष सभी घर-बाहर सब जगह हिंदी बोला करते हैं।

अब वहां बंगाली शरणार्थियों के बसाये जाने के कारण बंगला बोलनेवालों की संख्या दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। बंगाली लोग अपनी भाषा, रीति-रिवाज और रहन-सहन से इतना प्रेम करते हैं कि पहले के अंडमानी उन्हें अपनेसे गैर समझने लगे हैं। मगर उम्मीद है कि अलगाव की यह भावना धीरे-धीरे कम होती जायगी।

मेरे पहुंचने के चार-पांच दिन बाद वहां होली थी। अंडमानी समाज की नजदीक से झांकी लेने के खयाल से मैं भी कपड़े खराब करने पर तुल गया। अबर्डीन बाजार में होली का रंग खूब जमा हुआ था। मैं भी

उसमें शामिल हो गया। देखकर बड़ी खुशी हुई कि क्या हिंदू और क्या मुसलमान और क्या सिख और ईसाई, सभी होली के रंग में रंगे हुए थे। एक-दूसरे पर रंग की पिचकारी छोड़ने में विभोर हो रहे थे। बाहर और भीतर से एक थे। न कोई अलगाव था, न मनमुटाव।

अंडमानियों में तलाक का आम रिवाज है। स्त्रियों का पहनावा एक जैसा है—साड़ी और ब्लाउज, मगर पुरुषों का एक जैसा नहीं है। नौजवानों में सूट-बूट का रिवाज हो चला है, मगर बूढ़े-बुजुर्ग लोग धोती-कुरता ही पहनते हैं। अंडमानी समाज में बर्मी लोग भी हैं। उनके रीति-रिवाज और पहनावा अपने देश जैसा है।

भारत के दूसरे लोगों से अंडमानी लोग ज्यादा सुखी हैं। वहां भूखा-नंगा कोई नहीं है। मगर शराब. मांस और जुए का वहां खूब प्रचार है। इस विलासी जीवन के कारण वे लोग ऊंचे चढ़कर सोचने के आदी नहीं हैं। एक सरकारी हाई स्कूल है, लेकिन पढ़ाई-लिखाई के मामले में वे अब भी बहुत पिछड़े हैं। मेहमान-नवाजी मुझे कम दिखाई दी। लेकिन एक सबसे बड़ी इस खूबी का पता चला कि कैदियों से बने उस समाज में चोरी की आदत नहीं है!

अंडमानियों की आबादी यद्यपि उत्तरी अंडमान

तक के कई द्वीपों में फैली हुई है, लेकिन सबसे ज्यादा आबादी दक्षिणी अंडमान के 'पोर्ट ब्लेअर' जिले में है और उससे भी ज्यादा पोर्ट ब्लेअर की अबर्डीन बस्ती में। अकेले अबर्डीन में आठ-नौ हजार लोग होंगे।

कालापानी में सिर्फ दो मौसम होते हैं——वर्षा और बसंत। मई से लेकर दिसम्बर तक आठ महीने वर्षा और जनवरी से अप्रैल तक चार महीने बसंत। पृथ्वी बीचवाली रेखा के पास होने के कारण यहां ठंड नहीं होती, लेकिन चारों ओर समुद्र से घिरा होने के कारण यहां गरमी भी ज्यादा नहीं होती, क्योंकि समुद्र की लहरों पर से छन-छनकर आती हुई हवा अपने साथ की नमी से यहां की गरमी को कम करती रहती है। इस जलवायु के कारण ही यहां वर्षा बहुत होती है और पेड़-पौधे आसानी से उगते हैं। यही कारण है कि यहां के जंगल बड़े घने हैं। पेड़ काफी बड़े हैं। इन जंगलों की लकड़ियों के व्यापार से सरकार को बड़ा लाभ है और इन जंगलों की कटाई और सफाई के लिए बिहार और मद्रास के हजारों मजदूर 'गिरमिटिया' बनाकर यहां लाये जाते हैं। इन मजदूरों को दो साल तक काम करते रहने के शर्तनामे पर दस्तखत या अंगूठे का निशान देना पड़ता है। इनकी मजदूरी बंधी हुई होती है। शर्तनामे की मियाद खतम होने पर वे अपनी इच्छा से वहां बस भी सकते हैं।

यहां की जमीन बड़ी उपजाऊ है। खास उपज धान, लकड़ी और नारियल है। वैसे इस जमीन में सभी तरह के अनाज और साग-सब्जी पैदा किये जा सकते हैं।

एक एकड़ में पचास-साठ मन धान पैदा होना कोई बड़ी बात नहीं मानी जाती। कुछ लोगों ने नारियलों के अनेक बाग लगा रखे हैं, जिनके व्यापार से उन्हें कम लाभ नहीं होता। दियासलाई की तीलियां बनाने का एक कारखाना भी है।

बंगाली शरणार्थियों के आने के बाद से साग-सब्जी की खेती में तरक्की शुरू हो गई है। समुद्री मछलियों के अलावा जंगली हिरन और मुर्गी का मांस ये लोग ज्यादा खाते हैं। यही कारण है कि हर अंडमानी के घर के आगे-पीछे पालतू मुर्गियों की टोलियां कुड़कती और फुदकती नजर आती हैं।

उत्तरी अंडमान में आधे मन तक के तरबूज होते हैं। दो-ढाई सेर का बैगन तो आम बात है। फलों में आम, कटहल, केले और अमरूद होते हैं। नारियल के डाब का पानी पीने का खूब रिवाज है।

: ३ :

वहां के मूल निवासियों की शक्ल-सूरत और रहन-सहन का हम भारतीयों से कोई मेल नहीं है। उनके औरत-मर्द आज भी नंग-धड़ंग रहने में जरा भी शर्म महसूस नहीं करते। वे अन्न खाना नहीं जानते।

मांस-मछलियों के शिकार पर जीते हैं। बेफिक्री की जिंदगी बसर करते हैं और उनका खास हथियार तीर और धनुष है।
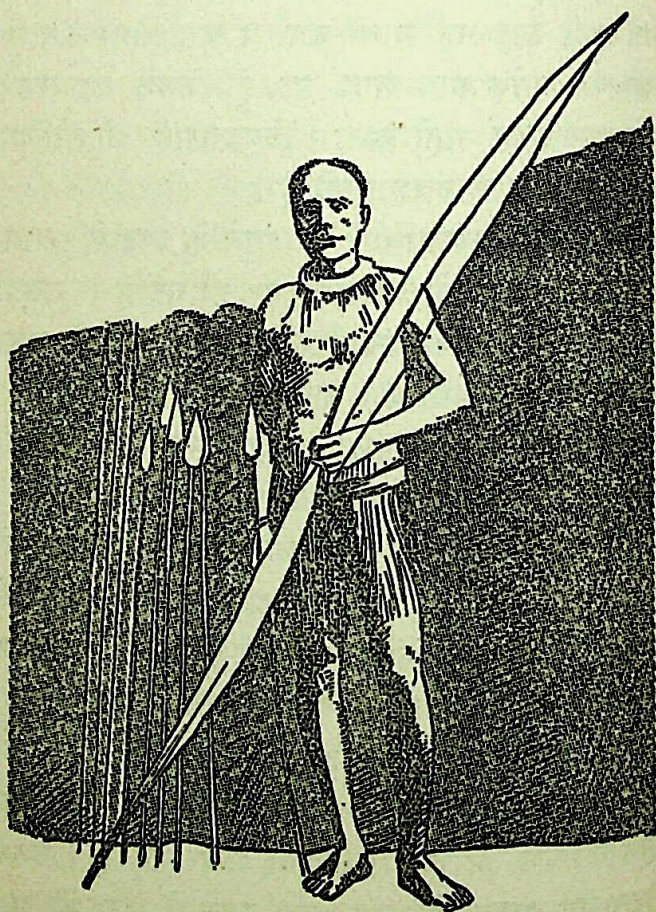
अंडमान का एक मूल निवासी

मैं सरकारी पास लेकर एक लकड़ी लादनेवाले जहाज से उत्तरी अंडमान की ओर चला। दूसरे दिन सवेरा होते ही जहाज एक टापू के किनारे जा लगा। यहां से लकड़ी लादकर जहाज को पोर्ट ब्लेअर वापस जाना था। जंगलात के अफसर और दो कांस्टेबलों के साथ मैं टापू के भीतर गया। जंगल की कटाई और सफाई हो रही थी। पेड़ों की लंबाई-चौड़ाई देखकर मैं दंग रह गया। कुछ दूर आगे जाने पर एक अजीब शक्ल का आदमी कंधे पर बंदूक लिये हमारे सामने आ गया। जंगलात के अफसर मुस्कराते हुए आगे बढ़े और उस आदमी के कंधे पर हाथ रखकर मुझसे बोले "ऐसी शक्ल कभी देखी है आपने ? यह इस जंगल का राजा है।" फिर उसके कंधे को झक-झोरते हुए बोले, "क्यों रे कोट्टा, है न तू ? बोलता क्यों नहीं?" कोट्टा जवाब में अपने बत्तीसों पीले दांत दिखाता हुआ खिलखिला पड़ा।

कोट्टा का कद बिल्कुल ठिगना था और रंग कोयले-जैसा काला, आंखें गोल-गोल, पीली और चम-कीली। टूटी-फूटी हिंदी वह बोल लेता था। मालूम हुआ कि अंडमान की बारह जंगली जातियों में कोट्टा 'येरावा' जाति का था। अब वह जंगल में सरकारी नौकर था। इसलिए नंग-धड़ंग न होकर निकर-बनि-यान पहने हुए था।

इन जंगली जातियों में 'जरावा' जाति के लोग अभी तक सरकार के हाथों में नहीं आ सके। वे घने जंगल में छिपे रहते हैं। कभी कोई सरकारी अफसर या पुलिस का आदमी उनके पास से गुजरता है तो वे अपने तीखे तीरों का उन्हें निशाना बनाये बिना नहीं रहते। उनके तीरों की नोक ज़हर में पगी होने के कारण वे बड़े मारू होते हैं।

इन्हीं जंगलियों में 'उङ्गी' जाति के लोगों को मैंने पोर्ट ब्लेअर की गलियों में देखा था। ये लोग छठे-छमाह अपने द्वीपों से निकलकर पतली नाव पर समुद्र पार करके पोर्ट ब्लेअर आ जाते हैं। उन्हें मालूम है कि वहां नंगा नहीं जाना चाहिए। इसलिए चार अंगुल की कौपीन वे जरूर पहन लेते हैं। अंग्रेजों के जमाने से ही यह रिवाज चला आ रहा है कि जब कभी वे पोर्ट ब्लेअर आते हैं, चीफ कमिश्नर की ओर से उन्हें बतौर भेंट के एक-एक निकर और बनियान के अलावा सेर-आधा सेर चीनी और तम्बाकू दिया जाता है। इस भेंट की वसूली के निमित्त ही वे आते हैं। अपने द्वीपों में पहुंचते ही वे निकर और बनियान फेंक देते हैं। चीनी फांक जाते हैं और तंबाकू चुरट बनाकर पी जाते हैं।

इन सभी जातियों के अपने अलग-अलग द्वीप हैं। उनकी बोलियां भी अलग-अलग हैं। जंगली हिरन, सूअर, वन-मुर्गी के अलावा समुद्र से मछली का शिकार

करके जीते हैं। वे अपने तीखे तीरों का वार पानी पर तैरती मछलियों पर भी बड़ी कामयाबी से करते हैं। सारे अंडमान में इन जंगलियों की तादाद पांच-छः हजार है, पर अब दिनों-दिन घटती जा रही है।

इन जंगलियों को यह शायद नहीं मालूम कि उनके द्वीपों पर किसी अन्य जाति का कब्जा है। वे अपनेको अपने द्वीप का मालिक मानते हैं। अंग्रेजों के जमाने की बात है : चीफ कमिश्नर इनके जंगल में गया था। उन्होंने सलाम नहीं किया। चीफ कमिश्नर की ओर से सलाम करने के लिए इशारा किया गया। जवाब मिला, "पहले तुम सलाम करो तो हम करेगा! तुम 'पोट बिलियर' का राजा है, हम अंडमान का राजा हैं। तुमसे बड़ा है।"

: ४ :

अब हम उन द्वीपों की भी सैर करें, जो काला-पानी का हिस्सा होते हुए भी अंडमान के द्वीपों से अलग हैं। उन द्वीपों के नाम निकोबार हैं, जो अंडमान के दक्षिण में सौ-सवा सौ मील आगे बसे हुए हैं।

अंग्रेजों के जमाने से ही यह रिवाज चला आ रहा है कि हर साल अप्रैल के महीने में अपने दल-बल के साथ चीफ कमिश्नर निकोबार के द्वीपों की यात्रा करते हैं। चीफ कमिश्नर की यात्रा-पार्टी में मैं भी शामिल हो गया। हमारा 'महाराजा' नामक जहाज रात के
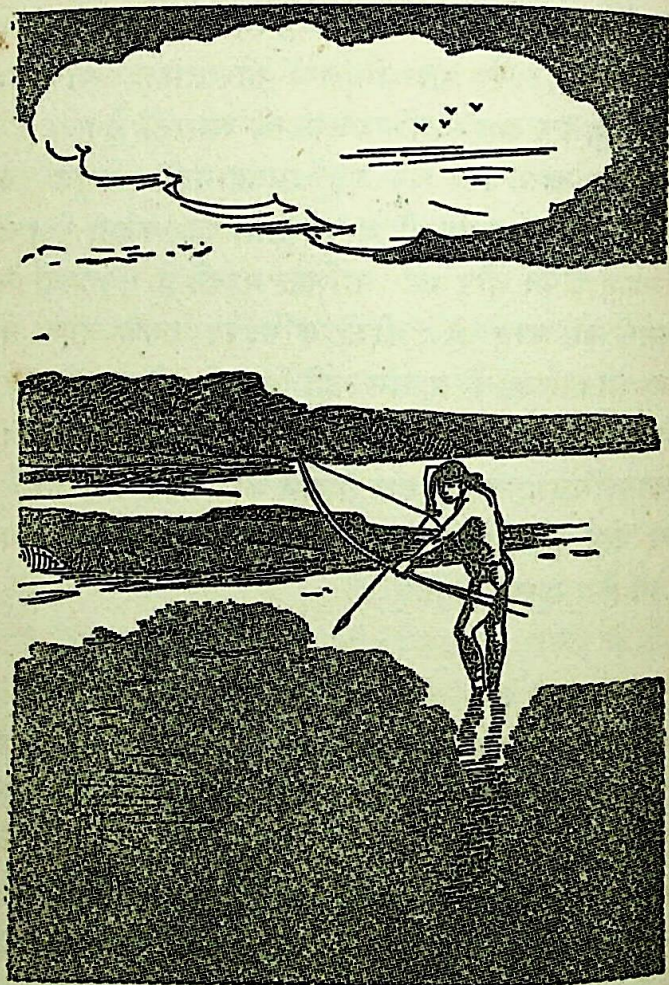
पानी पर तैरती हुई मछलियों का शिकार

लगभग बारह बजे पोर्ट ब्लेअर बंदरगाह से रवाना हुआ। समुद्री हवा के मीठे थपेड़े खाकर हम बहुत जल्द निद्रा माता के आंचल में जा छिपे। दूसरे दिन सुबह नींद खुली। चारों ओर समुद्र की मचलती हुई लहरों के सिवा और कुछ दिखाई न दे रहा था। दिशाओं के ओर-छोर को छूता हुआ समुद्र का गहरा काला पानी फैला हुआ था और सारा आकाश एक तनी हुई विशाल छतरी की तरह चारों ओर से इस पानी को ढके हुए जान पड़ता था।

दिन के लगभग १ बजे हमारा जहाज उस द्वीप के किनारे से लगभग आधा मील दूर समुद्र में लंगर डाल-कर खड़ा हो गया! घने जंगलों से ढके होने के कारण द्वीप का भीतरी भाग दिखाई न दे रहा था, लेकिन हरे-हरे पेड़ों की कतारों से सुशोभित उसका किनारा साफ दिखाई दे रहा था। पूछने पर मालूम हुआ कि इस द्वीप का नाम 'छोटा अंडमान' है। यह अंडमान के द्वीपों के बिल्कुल दक्षिणी छोर पर खड़ा है!

अब उस द्वीप के भीतर जाने की तैयारी होने लगी। जहाज से बंधी हुई दो मोटर-बोटें समुद्र में उतारी गईं। थोड़े-से लोग ही उनमें जा सकते थे। इस द्वीप के मूल निवासी 'उङ्गी' कहे जाते हैं। इक्कीस उङ्गी पुरुष पोर्ट ब्लेअर से ही हमारे साथ आ रहे थे। उन्हें भी द्वीप के भीतर जाना था। चीफ कमिश्नर के

गिने-चुने सहयोगियों के साथ मैं भी मोटर-बोट पर बैठकर किनारे पहुंचा और साथ के उन उङ्गियों के बताये रास्ते से हम द्वीप के भीतर पहुंचे। घने जंगल के बीच एक छोटा-सा खुला मैदान था जिसमें कुछ झोंपड़ियां खड़ी थीं। हमें देखते ही ठिगने कद की काली-काली नंग-धड़ंग औरतें भागकर जंगल में जा छिपीं। कुछ नंग-धड़ंग बच्चे तनिक डरे हुए-से, कौतूहलभरी आंखों से हमें देखने लगे। और कुछ पुरुष उङ्गी झट कौपीन से अपनी लाज ढककर हमारे सामने आ खड़े हुए। चीफ कमिश्नर ने उन्हें सलाम किया। हर आदमी को एक-एक निकर-बनियान तथा चीनी और तंबाकू दिया। इस भेंट को पाकर वे खुश हो उठे। हाथ के इशारे से ही बातें हुईं।

साथ के वे इक्कीस उङ्गी वहीं रह गये और हम लगभग डेढ़ घंटे बाद अपने जहाज पर वापस आगये। रात के दस बजे जहाज को आगे चलना था। सूरज अब छिप चुका था। अंधेरे की हल्की छाया समुद्र पर फैल चुकी थी। इसी बीच हमने देखा कि द्वीप की ओर से कुछ जलती हुई मशालें हमारे जहाज की ओर बढ़ी आ रही हैं। कुछ मिनटों में ही वह रोशनी जहाज के बिल्कुल पास आ पहुंची। उस रोशनी में हमें साफ दिखाई दिया कि पांच हट्टे-कट्टे उङ्गी ुरुष एक लंबी, पतली, नुकीली नाव पर बैठे खूब तेजी से पतवार चला

रहे हैं। वह नाव जहाज के किनारे से आ लगी। नाव को जहाज से बांधकर वे सीढ़ी के सहारे झट डेक पर आ पहुंचे और हाथ के इशारे से अपने आने का मतलब बताने लगे। लोगों को समझते देर न लगी कि वे नेकर, बनियान, चीनी, तंबाकू की भेंट वसूलने आये हैं। जिस समय चीफ कमिश्नर की पार्टी द्वीप में पहुंची थी, वे कहीं जंगल में शिकार पर थे। घर वापस आने पर जब उन्हें मालूम हुआ तो वे भी उस भेंट की वसूली के लिए दौड़ पड़े।

वे सब एक-एक कौपीन मात्र पहने थे, शेष सारा बदन नंगा था। उनके शरीर की मजबूत गठन पर ईर्ष्या हो रही थी। सबके हाथ में एक-एक तीर-कमान भी था। सरकारी पुलिस के एक कांस्टेबल ने एक के हाथ से तीर-कमान लेकर उसकी डोरी चढ़ाने की कोशिश की, मगर डोरी चढ़ न सकी। तब उस उङ्गी ने अपनी खीसें निपोरकर खिलखिलाते हुए उसके हाथ से कमान लेकर बड़ी आसानी से उसे झुकाकर डोरी चढ़ा दी और फिर उसपर तीर चढ़ाकर निशाना साधने का तरीका भी दिखा दिया। कमान बांस के मजबूत फट्टे को बरीकी से छील-छालकर बनाया गया था। तीर की नोक लोहे की थी, मूठ भी लोहे की, परंतु धड़ बांस की मजबूत कमची का था।

असिस्टेंट पुलिस सुपरिंटेंडेंट ने उनसे एक तीर-

कमान लेकर बदले में निकर, बनियान, पाव रोटी का एक बड़ा टुकड़ा और पानी पीने का जग दे दिया। भेंट वसूल कर वे हँसी-खुशी वापस चले गये। जहाज ठीक समय पर आगे रवाना हो पड़ा।

दूसरे दिन सवेरे फिर एक अजीब नजारा सामने आया! सवेरे का नाश्ता करके मैं डेक की रेलिंग के किनारे चहल-कदमी कर रहा था। इसी बीच कई लोगों की कौतूहलभरी आवाज सुनाई दी—"वह देखो! उधर देखो!" और तब मेरी भी निगाह उस ओर दौड़ पड़ी। देखकर बड़ा अचरज हुआ! हजारों मछलियों का झुंड जहाज की तरफ दौड़ पड़ा था! किसीका भी वजन मन-डेढ़ मन से कम नहीं लग रहा था। वे छलांगें भर-भरकर जहाज की ओर दौड़ने लगीं! लेकिन फिर भी वे जहाज की दस मील फी घंटे की चाल का मुकाबला नहीं कर पा रही थीं।

उन मछलियों के शील-स्वभाव के बारे में एक आदमी ने बताया कि वे बड़ी नेक होती हैं। अगर उनके इलाके में कोई आदमी डूब जाय तो उसे निगलने के बजाय उसके शरीर को ठेल-ठालकर किनारे तक पहुंचा आती हैं! उन मछलियों की दया की यह कहानी सुनकर अचरज भी हुआ, खुशी भी हुई!

लगभग नौ बजे सवेरे हमारा जहाज एक दूसरे सुंदर द्वीप के किनारे आ लगा। किनारे से लगभग दो

फर्लांग दूर समुद्र में वह लंगर डालकर खड़ा हो गया। मालूम हुआ कि यह निकोबार के द्वीपों में पहला द्वीप 'कार निकोबार' है। किनारे से कई नावें बड़ी तेजी से जहाज की ओर चल पड़ीं। उन नावों पर कार निकोबार के सरकारी कर्मचारी और वहां के मूल निवासी थे। एक नाव डाबों से भरी थी। सीढ़ी के सहारे वे जहाज पर पहुंचकर उन डाबों को अपने तेज हंसिये से काट-काटकर बड़े आदर से उसका स्वादिष्ट पानी हमें पिलाने लगे। निकोबार के मूलवासी अंडमान के मूलवासियों की तरह काले-कलूटे या कुरूप न थे। लेकिन कद में उन्हीं-जैसे थे।

उनके चेहरे की बनावट मंगोलों-जैसी थी—नाक जरा चिपटी हुई, आंखें तनिक भीतर की ओर और गाल की हड्डियां जरा उभरी हुईं। रंग गोरा और गेंहुआ। शरीर खूब कसा हुआ। पहले ये लोग भी नंग-धड़ंग रहा करते थे, लेकिन चालीस-पचास साल से पादरियों द्वारा उनमें धर्म और शिक्षा के प्रचार के कारण कपड़े पहनने का रिवाज चालू हो चला है। बूढ़े लोग अब भी कौपीन पहने होते हैं और औरतें कमर से नीचे एक लुंगी मात्र। जवान लड़कियों का भी सीना ढका नहीं होता। मगर स्कूलों में पढ़ने-वाली लड़कियों की पोशाक जाकेट और लुंगी होती है। लड़के निकर और बनियान पहनते हैं। लड़कियां

भड़कीले कपड़ों को ज्यादा पसंद करती हैं। इस पोशाक में वे बड़ी सुंदर दीखती हैं।

वे लोग अन्न नहीं खाते। नारियल का पानी और उसके नीचे की मलाई इनका मुख्य भोजन है। केला, पपीता, केवड़ा और रतालू भी खाते हैं। जंगली हिरन और सूअर के अलावा मछली का शिकार भी करते हैं।

चीफ कमिश्नर की पार्टी के साथ मैं भी नाव से किनारे पहुंचकर द्वीप के भीतर पहुंचा। उस घाट का नाम 'मूस' था। कार निकोबार के कुल चौदह-पंद्रह गांवों में 'मूस' सबसे बड़ा गांव है, जहां प्राइमरी स्कूल है, अस्पताल है, एक बड़ा गिर्जाघर है और ईसाइयों का एक बड़ा कब्रगाह भी।

अब हम जीप और ट्रक पर लदकर मस से चार-पांच मील आगे 'मलाका' गांव की ओर चले जहां निकोबार के द्वीपों की राजधानी है, जहां असिस्टेंट कमिश्नर का आफिस और निवास है। वहीं हमें दोपहर का भोजन करना था।

जीप से मलाका की ओर बढ़ते हुए हम उस द्वीप की सुंदरता पर मुग्ध हो रहे थे! सड़क की रेतीली सफेदी को छोड़ बाकी सारा द्वीप हरियाली से ढका हुआ मालूम पड़ रहा था। उस हरियाली में छिपे हुए गांव दिखाई नहीं दे रहे थे। नारियल के लंबे वृक्ष डाबों से लदे हुए थे। केले की हरी-हरी झाड़ियां भी

फलों से लदी थीं। सुपारी और केवड़े के वृक्ष भी बड़े मनोहर थे। नारियल की छोटी-छोटी झाड़ियों में तो स्वयं सुंदरता मुस्कराती दीख रही थी। यहां अंडमान के द्वीपों का डरावनापन कहीं भी नजर नहीं आ रहा था।

असिस्टेंट कमिश्नर के यहां हमने दोपहर का भोजन किया। निकोबारी बच्चों की स्वयंसेवक टुकड़ी की कवायद बड़ी अच्छी रही! फिर दिन के तीसरे पहर हम जीप और ट्रक पर सवार हो मूस गांव की ओर चले। गांव के स्कूल के मैदान में आज चीफ कमिश्नर के स्वागत में खेल का आयोजन था। खेल में दो पक्ष थे---एक तरफ निकोबारी नौजवान और दूसरी तरफ पोर्ट ब्लेअर से आये हुए सरकारी कर्मचारी। केवल रस्सा-कस्सी के खेल में ही पोर्ट ब्लेअरवालों की जीत रही। बाकी सभी खेलों में निकोबारियों की। और गेंद के खेल में तो निकोबारियों की कुशलता देख मैं दंग रह गया! घंटे भर एक-एक करके दस गोल बनाकर उन्होंने पोर्ट ब्लेअरियों को बिल्कुल मात दे दी! विजयी खिलाड़ियों को चीफ कमिश्नर की मेम ने अनेक इनाम दिये।

शाम को निकोबारी लड़कों ने हिंदी में एक नाटक खेला। असिस्टेंट कमिश्नर ने यहां खुद हिंदी का प्रचार शुरू कर दिया था। उन्होंने ही महाभारत

की 'युधिष्ठिर-यक्ष-संवाद' नामक कहानी को 'जहरीला तालाब' नाम देकर उन लड़कों को नाटक खेलने के लिए तैयार किया था। नाटक के मंच पर धोती पहने हुए और हिंदी बोलते हुए वे निकोबारी बच्चे बड़े भले दिखाई दे रहे थे।

नाटक खत्म होने पर चीफ कमिश्नर अपनी पार्टी-सहित जहाज पर वापस चले गये और मैं जहाज की वापसी के इंतजार में सप्ताह भर के लिए कार निकोबार में ही रुक गया, क्योंकि उन द्वीपों में हिंदी के प्रचार के लिए मुझे वहां कुछ व्यवस्था करनी थी। रकबे में सबसे छोटा है, मगर आबादी में निकोबार के इक्कीस द्वीपों में सबसे बड़ा, क्योंकि इसकी जमीन बड़ी चौरस होने के कारण बसने के लायक है। निकोबार के सभी द्वीपों की कुल आबादी पंद्रह-सोलह हजार के करीब है, जिसमें अकेले इस छोटे द्वीप की आबादी दस-ग्यारह हजार है। इसलिए सरकार का बड़ा दफ्तर यहीं है। यहां असिस्टेंट कमिश्नर की निगरानी में हुकूमत का काम चलता है। पादरियों का एक बड़ा गिर्जाघर है। मगर बरसों की कोशिशों के बावजूद भी सभी लोग ईसाई नहीं बन पाए। ईसाई निकोबारियों के दो नाम होते हैं—एक निकोबारी और दूसरा अंग्रेजी। गांवों में कई सरकारी स्कूल भी हैं, जिनमें अपर प्राइमरी तक पढ़ाई-लिखाई का प्रबंध है। स्कूलों में लड़कियों

की संख्या लड़कों से कम नहीं देखी। रोमन लिपि में उन्हें 'निकोबारी' की शिक्षा दी जाती है। अंग्रेजी के अलावा अब हिंदी भी पढ़ाई जाने लगी है। देवनागरी में उनके हाथ की लिखावट की खूबसूरती देखकर तो मैं दंग रह गया।

मैंने गांवों में जाने पर वहां गंदगी नहीं देखी, क्योंकि मिट्टी रेतीली होने के कारण कीचड़ नहीं होती। यहां भी अंडमान की भांति ही घनघोर वर्षा होती है, मगर पानी को समुद्र में जाते देर नहीं लगती। इसलिए जमीन सूखी और स्वच्छ बनी रहती है। गांव के घरों के आस-पास कटहल, पपीता और केले के पेड़ लगाने का वहां आम रिवाज देखा।

लोगों के घर कुछ-कुछ अंडे-जैसे गोल होते हैं, जिनके फर्श बांस और काठ की बल्लियों पर जमीन से ६-७ फुट ऊंचाई पर होते हैं। फर्श के नीचे की जगह बारहदरी-सी खुली होने के कारण बैठकखाने के तौर पर इस्तेमाल की जाती है। लेकिन घर में खिड़की एक भी नहीं होती। हवा दरवाजे से अथवा फर्श के फट्टों के छेद से होकर घर में दाखिल होती है। सारा घर एक कमरे के रूप में होता है, जिसमें प्रवेश करने के लिए दरवाजे से बांस की एक सीढ़ी लगी होती है। घर में अंदर जाकर बांस की खपच्चों को बड़ी कारी-गरी से तिरछे जोड़कर उनपर बनाये गये घास-फूस

के छप्पर की खूबसूरती और मजबूती देखते ही बनती है। ज्यादातर आठ-दस घरों का एक गांव होता है।

हर गांव में एक मुखिया होता है, जिसपर आपसी झगड़ों के निपटारे की जिम्मेदारी होती है। वैसे झगड़े होते ही कम हैं, क्योंकि झगड़ों के कारणों की अभी वहां कमी है। अमीरी और गरीबी वहां नहीं है। कुछ लोग सरकारी नौकर जरूर हैं, मगर आपस में कोई किसीका नौकर नहीं है। गुजारे के लिए दौड़-धूप या अधिक मेहनत की जरूरत नहीं रहती। सवेरे नारियल का पानी, दूध और मलाई खाकर वे जंगल में चले जाते हैं। मामूली मेहनत का काम, जैसे पेड़-पौधों की जड़ को साफ कर देने के सिवा कोई कठिन काम नहीं करते। फिर शाम से पहले कंधे पर बहंगी में नारियल के डाब और केले आदि लटकाए घर वापस आ जाते हैं।

स्त्री-पुरुष के अनुचित संबंध को लेकर कभी-कभी कुछ झगड़ा जरूर होता है, मगर उसे शांत होते देर नहीं लगती। मार-पीट की नौबत नहीं आती। मुखिया उन्हें समझा-बुझाकर आपस में सुलह करा देता है, अथवा तलाक देकर दोनों पक्ष अलग हो जाते हैं। यद्यपि व्यभिचार को वे अच्छा नहीं मानते, तथापि बदचलनी के अपराध में कोई पति अपनी पत्नी को मार-पीट नहीं सकता। एक समय में एक मर्द एक ही

बीवी रख सकता है। अनमेल विवाह का रिवाज भी वहां दिखाई दिया।

ये लोग झूठ कम बोलते हैं। बेईमानी-शैतानी की तरफ झुकाव नहीं है। चोरी की आदत किसीमें भी नहीं। इनके घर पर कोई मेहमान जाय तो नारियल, केले और पपीते से खातिर करते हैं। अलग-अलग महीनों में इनके अलग-अलग त्योहार होते हैं, जिन्हें ये नाच-गाकर और खा-पीकर बड़े ठाठ से मनाते हैं। ऐसे अवसरों पर घर के दरवाजों पर सूअर की चर्बी भी टांगते हैं। नारियल की ताड़ी को शराब के तौर पर इस्तेमाल करते हैं।

निकोबारी लोग आपसी लेन-देन में सिक्के के तौर पर नारियल का इस्तेमाल करते हैं, मगर अब वे समय के प्रभाव से नोट और रुपये-पैसों को पहचानने लग गये हैं।

'होल चू'—अर्थात्—'ओ मेरे दोस्त' कहकर वे एक-दूसरे को पुकारते हैं। वहां 'हिनेंगो रालो'—अर्थात्—'नौजवान-सभा' नाम की एक संस्था भी है। यह संस्था निकोबारी नौजवानों की भलाई के हर पहलू पर ध्यान देती है। इस संस्था के जरिये वहां नारियल की लकड़ी की बनी चीजें, समुद्र के शंख और सीप तथा हाथ की बनी दूसरी चीजें भी बेची जाती हैं। वहां एक बहुत सुंदर सरकारी अस्पताल भी है
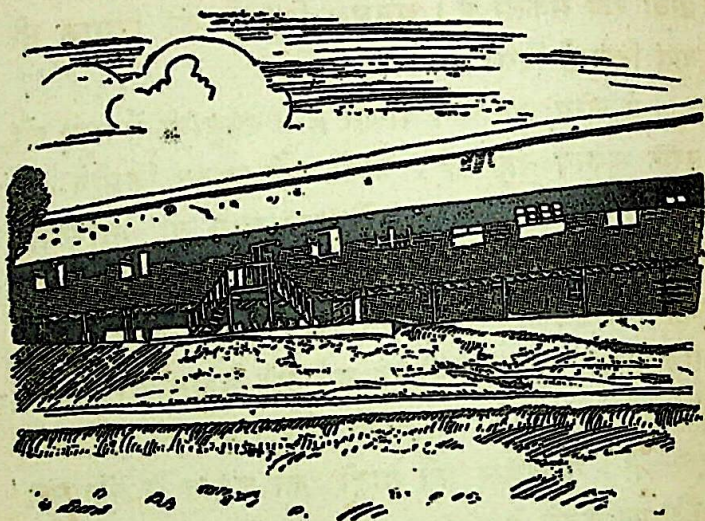
सरकारी अस्पताल

निकोबार के दूसरे द्वीपों के लोगों में भी कुछ इसी प्रकार का रिवाज है। 'चौरा' नामक द्वीप के निकोबारी जादू-टोने के लिए मशहूर हैं। जो लोग अभी ईसाई नहीं बने, वे अपने मुर्दों को न जलाते हैं, न दफनाते हैं, बल्कि उन्हें लकड़ी की एक छोटी नाव में रखकर पेड़ पर लटका देते हैं।

सातवें दिन चीफ कमिश्नर का जहाज कार-निकोबार के किनारे से फिर आ लगा। उस द्वीप की सुंदरता को नमस्कार करके मैं जहाज से पोर्ट ब्लेअर की ओर रवाना हो पड़ा।

सस्ता साहित्य मण्डल